NAGARI PRACHARINI GRANTHMALA SERIES No. 10.

महिलामृदुवाणी ।

जिसमे

काव्यकुशला कवियाकान्ताओं

की

काव्यरचना और जीवनचरित्रों

का

वर्णन है ।

मुन्शी देवीप्रसाद मुनसिफ़ जोधपुर रचित

और

काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

1905.

PRINTED AT THE TARA PRESS, BENARES.

भूमिका ।

—:o:—

भारतवर्ष की पुण्य भूमि में अकेले पुरुष ही चौदह
या निधान नहीं हुए हैं बरन स्त्रियाँ भी समय २
ऐसी होती रही हैं जो सोने चाँदी और रत्न जड़ित
भूषणों के अतिरिक्त विद्या बुद्धि और काव्य कला
दिव्य भूषणों से भी भूषित थीं और अब भी हैं जिन
बखान अनेक पुस्तकों और जन श्रुतिओं में विद्यमान
। पर हमको यहाँ केवल कवियाकांताओं से प्रयोजन
जिनकी भाषा कविता का अब तक कोई स्वतंत्र ग्रंथ
मारे देखने में नहीं आया था और हमने जो भाषा
वियों का इतिहास लिखने के लिये प्राचीन ग्रंथों
र कविवृत्तांतों की खोज की थी तो उस प्रसंग में
छ कविता ऐसी भी मिली जो काव्यकुशला कम-
ाओं के कोमल मुखारबिंदों की निकली हुई थीं।
मने उसीको संग्रह करके यह छोटा सा ग्रंथ बनाया
और महिलामृदुवाणी नाम रक्खा है ।

आशा है कि विद्वानलोग भूलचूक को क्षमा
रेंगे और यथासाध्य उसको सुधार भी देंगे ।

हमको कृष्णगढ़ के राजकवि जयलालजी, बूँदी के
बिराव रामनाथसिंह जी, उदयपुर के बारहट कृष्ण
सिंह जी, सिहोर काठियावाड़ के चौहान ठाकुर
बिंद गिल्लाभाई तथा जोधपुर के रामस्नेही साधु
लितराम जी प्यारारामजी और लाधूरामजी से
स ग्रंथ के बनाने में उचित सहायता मिली है इस
ये हम इन सब सज्जन पुरुषों के बहुत आभारी हैं ॥

जेठ सुदी ९ संवत् १९६१ — मु० देवीप्रसाद

ता० २३ मई सन् १९०४ । — जोधपुर ।

सूचीपत्र ।

संख्या	पृष्ठ	नाम।	पिताका नाम।	जाति।	स्थान।	साल संवत्।
१०	२८	झीमा चारनी	०	चारण बीठू	गागरोन कोटा	१४६० के लगभग
११	३२	तीजाजी	रामपुरोहित	ब्राह्मण	गाँव महार जि. जयपुर	१९५३
१२	३३	ताज	०	मुसल-मान	पंजाब	१७०० के लगभग
१३	३५	तुलछराय	०	०	जोधपुर	१९ ?
१४	३६	पद्माचारणी	मालाजी साँदू	चारण साँदू	बीकानेर	१६५४
१५	३८	बीराँ	०	०	जोधपुर	१८००में सतीहुई
१६	३९	प्रताप कुँवर (रानी)	गोयंदास गाँव जाखण मारवाड़	भाटी राजपूत	जोधपुर	१९४६में मृत्यु
१७	५९	मीराँ	रतनसिंह मेड़ता मारवाड़	राठोड़ मेड़तिया	चीतौड़	१६०३में मृत्यु
१८	७०	रणछोड़ कुँवर (रानी)	बलभद्रसिंह रीवाँ	बाघेला राजपूत	जोधपुर	विद्यमान हैं
१९	७२	रत्न कुँवरी बीबी	०	ओस-वाल	काशी	१८४४
२०	७४	रत्नकुँवरिबाई महारानी ईडर	लछमनसिंह	भाटी	जोधपुर	विद्यमान हैं

संख्या	पृष्ठ	नाम।	पिताका नाम।	जाति।	स्थान।	साल संवत्।
२१	७६	रसिकबिहारी बनीठनी जी	०	०	रूपनगर तथा वृन्दावन	१८२२में मृत्यु
२२	७८	रानीराड़धड़ी जी	०	राठोड़	सिरोही	१६५० के लगभग
२३	८०	रानी रामप्रियाजी	०	राजपूत	किला प्रतापगढ़ अवध	विद्यमान हैं
२४	८१	रायप्रबीन	०	पातर	बाँधोगढ़ रीवाँ	१६५० के लगभग
२५	८४	विष्णुप्रसाद कुँवरि	महाराजारघुराजसिंह रीवाँ	बाघेला	जोधपुर	विद्यमान हैं
२६	८७	बिरजू बाई	०	चारण कविया	मारवाड़	१८०० के लगभग
२७	८६	बिरंजी कुँवर	सीतलसिंह	रघुबंशी ठाकुर	नेवदाँ काशी	१६०५
२८	६२	बिहारीजी की स्त्री	०	चौबे	मथुरा	१७१६
२९	६३	बिहारी जी की पुत्री	"	"	"	"
३०	६४	ब्रजदासी रानी बाँकावत जी	राजा अनंद राम लिवाण	कछवाहा बाँकावत	कृष्णगढ़ राजपूताना	१७७६
३१	६६	शेखरंगरेजन	०	रंगरेज	०	१६५० के लगभग
३२	६६	सरस्वती देवी	राम चरित्र	ब्राह्मण	नगवा आजमगढ़ युक्त प्रदेश	विद्यमान हैं

संख्या	पृष्ठ	नाम।	पिताका नाम।	जाति।	स्थान।	साल संवत्।
३३	१०१	सहजो बाई	हरिप्रसाद	ढूँसर	मेवात ज़िला अलवर	१८०० के लगभग
३४	१०४	सुन्दर कुँवरि बाई	महाराजा राज सिंह कृष्णगढ़	राठोड़	रूपनगर	१७९१में जन्म
३५	१२६	हरीजी रानी	०	चावड़ा	जोधपुर	१८७९में मृत्यु

महिला मृदुवाणी ।

(१) कविरानी चौबे लोकनाथ जी की स्त्री अर्द्धांगिनी जी ।

बूँदी के राव राजा श्री *बुध सिंह जी के कविराजा चौबे लोकनाथ जी थे उनका वृत्तांत तो हम कवि रत्न माला में लिख चुके हैं उनकी धर्म पत्नी का यहाँ लिखते हैं ।

ये भी अपने पति के सत्संग से कविता करने लगी थीं और कविता भी उनके जैसी ही सुंदर, सरल और सरस करती थीं ।

एक समय कविराजा लोकनाथ जी राव राजा बुध सिंह जी के साथ दिल्ली को गए थे पीछे से कविरानी जी ने सुना कि राव राजा जी को अटक पार जाने का हुकम हुआ है और कविराजा जी भी साथ जावेंगे तो इन्होंने यह सोचकर कि वहाँ जाने से धर्म भ्रष्ट हो जावेगा १ कवित्त कविराजा जी को लिख भेजा जिस को राव राजा ७ ने भी बहुत पसंद किया । वह चोज़मय कवित्त यह है ।

कवित्त ।

मैं तो यह जानी ही कि लोकनाथ पाय पति
संगही रहोंगी अरधंग जैसे गिरिजा ॥
एंत पै विलक्षन ह्वै उत्तर गमन कीनो
कैसे कै मिटत ये वियोग विधि सिरिजा ॥

---

* राव राजा बुध सिंह जी संवत् १७५२ से संवत् १८०५ तक विद्यमान थे ।

अब तो जरूर तुम्हें अरज करेही बनै
वेहू द्विज जानि फरमाय हैं कि फिरि जा ॥
जोपैं तुम स्वामी आज अटक उलंघ जैहो
पाती माँहि कैसे लिखूँ मिश्र मोर मिरिजा ॥ १ ॥

(२) ठकुरानी काकरेची जी ।

ये गुजरात के अन्तर्गत काकरेची प्रदेश के गाँव दियोधर के ठाकुर बाघेला अगराजी की पुत्री थीं । इनका विवाह मारवाड़ देश के पश्चिम परगने साँचोर के सोनगरा चौहानराव बल्लू जी के पुत्र नरहरदास जी से हुआ था । बल्लू जी संवत् १६६६ में राज सिंहासन पर बैठे थे और शाहजहाँ बादशाह की सेवा में सपुत्र सपरिवार रहते थे । शाहजहाँ के बेटों में राज्य के वास्ते जो लड़ाइयाँ संवत् १७१४ से संवत् १७१६ तक होती रही थीं उनमें की किसी लड़ाई में बल्लू जी और नरहर जी काम आगए, नरहर जी के बेटे साँवलदास भी उन्हीं के साथ थे और काकरेची जी अपने नइहर में थीं । वे बहुत बुद्धिमान थीं और कविता में भी उनकी रुचि थी पति का पतन सुनकर अति आतुर हो गई थीं । उसी समय एक नाई जिसकी सूरत नरहरदास जी से बहुत मिलती थी नरहरदास बनकर दियोधर में गया और अगर जी से मिलकर कहने लगा कि मेरे मरने की ख़बर झूठी उड़गई है । मैं जीता हूँ और तुम लोगों का शोक निवारन करने के लिये बिना छुट्टी ही अकेला आया हूँ अगराजी भोले से ठाकुर थे उन्होंने उसका कहना मान लिया और बेटी से कहा कि नरहरदास जी आगए हैं तुम अपना भेष बदल डालो मेरे की बात बैरियों ने झूठ ही उड़ा दी थी । काकरेची जी ने इस बात का विश्वास नहीं किया और जब बाप ने बहुत ही कहा तो उस नक़ली नरहरदास को चिक में से देखकर यह दोहा कहा ।

*धर काली का कर धरा, †अध काला अगरेस ।
नरहर नेज़ाँ ‡बाजिया, क्यों पलटाऊँ बेस ॥ १ ॥

---

* बावली † आधा बावला ‡ नेज़ों से लड़कर मरा ।

और अपने नौकरों से कहा कि इस को निकालो यह जाली आदमी है। काकरेची जी के बनाए हुए दोहे तो और भी सुनते हैं पर हमें मिले नहीं।

(३) कुशला।

गाँव बड़ी देवरी ज़िले सागर की कविया श्री नर्मदा बाई का १ कवित्त कुशला की छाप से रसिकमित्र में छपा था वह हम यहाँ लिखते हैं और पाठकों को सूचना देते हैं कि हमने नर्मदा बाई के नाम उनके निवास स्थान के पते से उनका पूरा परिचय जानने के लिये पत्र भेजा था पर वह पीछो आगया इसलिये हम उनका कुछ वृत्तांत नहीं लिख सके।

मंजु कविताई वर परम बिचित्र जाकी।
कर कर बड़ाई कवि कोबिद सब हारे हैं॥
नूतन अनूप बहु भूषण भरे हैं सुवि।
दूषण न जामें कोई पावन निकारे हैं॥
व्यंग भाव चोखे सुभ नायका ललाम भेद।
अलंकार ताहू पै कुशला अधिकारे हैं॥
और जेते कविता में चाहिये ललित गुण।
रसिक मित्र पत्र में सु देखे हम सारे हैं॥ १॥

(४) खगनियाँ।

अवध प्रांत के ज़िले उन्नाव में "रणजीत पुरवा" नाम १ ग्राम है वहाँ बासूतेली की बेटी 'खगनियाँ' कुछ बहुत पढ़ी लिखी नहीं थी तो भी पहेलियाँ ऐसी उत्तम बनाती थी कि कवि लोग भी उनको पसंद करते थे और लिख लिख कर ले जाते थे।

जगत में अब तक लाखों तेलिन तेली हो गए और लाखों ही हो जावेंगे पर उन में से खगनियाँ का नाम ही चिरायु रहेगा या

उसके बाप का, क्योंकि वह बहुधा पहेलियों में उसका नाम भी लाई है ।

खगनियाँ की कुछ पहेलियाँ 'कवि रत्नाकर में से यहाँ लिखी जाती हैं, ।

चौपाई ।

हाथी हाथ हथनियाँ काँधे ।
चले जात हैं बकुचा बाँधे ॥ (गज, गजी)

आधा नर आधा मृगराज ।
युद्ध वियाह आवे काज ॥
आधा टूटि पेट में रहै ।
बासु केर खगनियाँ कहै ॥ (नरसिंहा)

लम्बी चौड़ी आँगुर चारि ।
दुहों ओर तैं डारिनि फारि ॥
जीव न होय जीव को गहै ।
बासु केर खगनियाँ कहै ॥ (ककही)

चारि पाँव बाँधे ते मोटि ।
अपने दल माँ सबते छोटि ॥
दुखी सुखी सब के घर रहै ।
बासु केर खगनियाँ कहै ॥ (जनानी चोली)

चौपाई ।

भीतर गदर ऊपर नाँगि, पानी पियै पगरा माँगि ।
तिहि की लिखा करारी रहै, बासु केरि खगनियाँ कहै ॥ (दवाइत)

(५) गिरिधर कविराय की स्त्री ।

गिरिधर कविराय की स्त्री भी कविया थी और ये भी अपने पति की देखा देखी उन्हीं की छाया पर नीति व्यवहार की कुंडलिया बनाया करती थीं जो गिरिधर कविराय की कुंडलियों में मिली जुली हैं और साईं के शब्द से आरंभ में आती है इसी से ये पहिचानी जाती हैं । कोई यों भी कहते हैं कि गिरिधर कविराय ने जितनी कुंडलिया बनाने का संकल्प किया था उतने बनाए बिना ही वे काल ग्रस्त होगए तब उनकी स्त्री ने शेष कुंडलियों का बनाकर उनका मनोरथ पूरा किया । कुछ ही हो पर इस में तो सब का मत एक है कि साईं शब्द वाली कुंडलियाँ गिरिधर जी की बनाई नहीं हैं उनकी स्त्री की बनाई हैं जिनमें से कुछ ये हैं ।

साँई बेटा बाप के बिगरे भए अकाज ।
हरणाकुसपु अरु कंस को गयो दुहुन को राज ॥
गयो दुहुन को राज बाप बेटा मे बिगरी ।
दुशमन दावागीर हँसे बहु मंडल नगरी ॥
कह गिरिधर कविराय युगन याही चलि आई ।
पिता पुत्र के बैर नफा कहु कौने पाई ॥ १ ॥
साँई ऐसे पुत्र से बांझ रहै बरु नारि ।
बिगेर बेटे बाप से जाय रहै ससुरारि ॥
जाय रहै ससुरारि नारि के हाथ बिकाने ।
कुल के धर्म नसाय और परिवार नसाने ॥
कह गिरिधर कविराय मातु झक्खे वहि ठाईं ।
असि पुत्रिनि नहीं होय बाँझ रहतिउ बरु साईं ॥ २ ॥
साईं पुर ज्वाला उठयो आसमान को धाय ।
अन्धहि पंगुहि छोड़िके पुरजन चले पराय ॥
पुरजन चले पराय अन्ध एक मत्र बिचार्‍यो ।
पंगुहिं लीन्हेउ कन्ध डीठ वाके पगु धार्‍यो ॥

कह गिरिधर कविराय सुमति ऐसी चलि आई ।
बिना सुमति को रंक पंक रावण भौ साईं ॥ ३ ॥

साईं *बैर न कीजिए गुरु, पण्डित, कवि, यार ।
बेटा, बनिता, *पँवरिया, यज्ञ करावनहार ॥
यज्ञ करावनहार, राजमंत्री जो होई ।
विप्र, परोसी, वैद्य, आप को तपे रसोई ॥
कह गिरिधर कविराय युगन ते यह चलि आई ।
इन तेरह मों तरह दिये बनि आवै साईं ॥ ४ ॥

साईं सत्य न जानिए खेलि शत्रु सँगसार ।
दाव परे नहिं चूकिए तुरत डारिए मार ॥
तुरत डारिए मार नरद कच्ची करि दीजे ।
कच्ची होय तो होय मार जगमें जस लीजे ॥
कह गिरिधर कविराय युगन याही चलि आईं ।
कितनो मिलै विघाय शत्रु को मारिये साईं ॥ ५ ॥

साईं तहाँ न जाइए जहाँ न आप सुहाय ।
बरन विषै जानै नहीं गदहा दाखैं खाय ॥
गदहा दाखैं खाय गऊ पर दृष्टि लगावै ।
सभा बैठि मुसक्याय यही सब नृप को भावै ॥
कह गिरिधर कविराय सुनो रे मेरे भाई ।
तहाँ न करिए बास तुरत उठि आइय साईं ॥ ६ ॥

साईं सब संसार में मतलब के व्यवहार ।
जब लग पैसा गाँठ में तब लगि ताको यार ॥
तब लगि ताको यार संगही संग में डोले ।
पैसा रहा न पास यार मुखहू न बोले ॥
कह गिरिधर कविराय जगत यह लेखा भाई ।
बिनु बेगरजी प्रीति यार बिरला कोई साईं ॥ ७ ॥

---

* पाठान्तर पौरिया

साईं जग में योग करि युक्ति न जाने कोय।
जब नारी गवने चली चढ़ी पालकी रोय॥
चढ़ी पालकी रोय जाने नहिं कोई जिय की।
रही सुरत तन छाय सु छतियाँ अपने हिय की॥
कह गिरिधर कविराय अरे जन होहु अनारी।
मुँह से कहै बनाय पेट में बिनवै नारी॥ ८॥
साईं घोड़े अछतही गदहन आयो राज।
कौआ लीजे हाथ में दूर कीजिए बाज॥
दूर कीजिए बाज राज पुनि ऐसो आयो।
सिंह कीजिए कैद स्यार गजराज चढ़ायो॥
कह गिरिधर कविराय जहाँ यह चूकि बड़ाई।
तहाँ न कीजे भोर साँझ उठि चलिए साईं॥ ९॥
साईं अवसर के परे जा न सहै दुख द्वन्द।
जाय बिकाने डोम घर वे राजा हरिचन्द॥
वे राजा हरिचन्द करी मरघट रखवारी।
फिरे तपस्वी भए बड़े अर्जुन बलधारी॥
कह गिरिधर कविराय तपे वह भीम रसोईं।
को,न, करै घटि काम परे अवसर के साईं॥ १०॥
साईं काेउ न विरोधियो छोट बड़ो इक भाय।
ऐसे भारी वृक्ष को कुल्हरी देत गिराय॥
कुल्हरी देत गिराय मार के जमी गिराई।
टूक टूक के काटि समुद्र में देत बहाई॥
कह गिरिधर कविराय फूटि जिहि के घर जाई।
हरणाकुस अरु कंस गये बलि रावण भाई॥ ११॥
साईं अपने चित्त की भूलि न कहिए कोइ।
तब लग मन में राखिए जब लग काम न होइ॥

जब लग काज न होइ भूलि कबहूँ ना कहिए ।
दुर्जन हँसे न कोय आप सियरे ह्वै रहिए ॥
कह गिरिधर कविराय बात चतुरन के ताई ।
करतूती कहि देत आप कहिए नाहिँ साईँ ॥ १२ ॥
साईँ अपने भ्रात को कबहु न दीजे त्रास ।
पलक दूर नहिँ कीजिए सदा राखिए पास ॥
सदा राखिए पास त्रास कबहूँ ना दीजे ।
त्रास दियो लंकेश ताहि की गति सुनि लीजे ॥
कह गिरिधर कविराय राम सोँ मिलियो जाई ।
पाय विभीषण राज्य लङ्कपति बाज्यो साईँ ॥ १३ ॥
साईँ नदी समुद्र को मिली बड़प्पनि जानि ।
जाति नाश भौ मिलतही मान महत की हानि ॥
मान महत की हानि कहो अब कैसी कीजे ।
जल खारी होइ गयो ताहि कहु कैसे पीजे ॥
कह गिरिधर कविराय कच्छ औ मछ सकुचाई ।
बड़ी फ़जीहत होय तबै नदियन की साईँ ॥ १४ ॥
साईँ सन औ दुष्ट जन इन को यहै सुभाव ।
खाल खिचावै आपनो पर-बन्धन के दाव ॥
पर-बन्धन के दाव खाल अपनो खिचवावैँ ।
मूड़ काटि के फबै तऊ वह बाज न आवैँ ॥
कह गिरिधर कविराय जरैँ आपनी कटाई ।
जल मेँ परि सर गए तऊ छाँडी न खुटाई ॥ १५ ॥
साईँ समय न चूकिये यथाशक्ति सन्मान ।
को जानै को आइहै तेरी पौरि प्रमान ॥
तेरी पौरि प्रमान समय असमय तकि आवै ।
ताको तू मन खोलि अङ्क भरि हृदय लगावै ॥

कह गिरिधर कविराय सबै या मे सुधि आई।
शीतल जल, फल, फूल समय जनि चूको साँई॥ १६॥

साँई ऐसी हरि करी बलि के द्वारे जाय।
पहिले हाथ पसारि के बहुरि पसारे पाय॥
बहुरि पसारे पाय मतो राजान बतायो।
भूमि सबै हरि लई बाँधि पाताल पठायो॥
कह गिरिधर कविराय राव राजन के ताँई।
छल बल कर प्रभु मिलै ताहि को तुष्टे साँई॥ १७॥

साँई अगर उजारि मे जरत महा पछिताय।
गुण गाहक कोऊ नहीं जाहि सुवास सुहाय॥
जाहि सुवास सुहाय सून बन कोऊ नाँही।
कै गीदर कै हिरन सुतौ कछु जानत नाँही॥
कह गिरिधर कविराय बड़ा दुख यहै गुसाँई।
अगर आक की राख भई मिलि एकै साँई॥ १८॥

(६) चन्द्रकला बाई।

बूँदी राज के कविराव गुलाबसिंह जी की दासी पुत्री है तो भी कविराव जी के साहचर्य्य से भाषा कविता में प्रवीन होकर नवीन २ उक्तियों से हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध कविसमाजों की समस्याओं की पूर्ति किया करती हैं जिन पर इनको कई कवि सभाओं से मानपत्र मिले हैं और ३० जून सन् ९८ को गाँव बिसवाँ ज़िला सीतापुर अवध की कविमंडली से वसुंधरारत्न की पदवी प्रदान हुई है।

करुणा शतक १, राम चरित्र २, पदवी प्रकाश ३, और महोत्सव प्रकाश ४ ये ग्रन्थ बाई जी के रचे हुए हैं।

ये कुछ वर्तमान कवित्त उनकी बनाई हैं।

कवित्त ।

सागर धरम को उजागर प्रवीन महा
परम उदार मन जन दुख टारनौ ॥
गुन रिझवार कवि कोविद निहाल कर
बैरी मदगार उपकार उर धारनौ ॥
चन्द्रकला कह रणधीर पर पीर टार
जस विसतार कर जग सुख सारनौ ॥
मारवाड़ नाथ सरदारसिंह शील सिंधु
आनंद को कंद दीन दारिद विदारनौ ॥ १ ॥
बूँदि नाथ प्रबल प्रतापी रामसिंह जू की
तनया सुशील सनी पर दुःख हारी है ॥
पति सरदारसिंह परम प्रवीन पाए
गुन रिझवार तुव पूरे हितकारी है ॥
चंद्रकला सकल कलान में निपुन आप
मति माँहि शारदा सी नीके निरधारी है ॥
भाग अहिवात तेरो सदाही अचल रहौ
जोलों शिव मस्तक पै गंगा सुखकारी है ॥ २ ॥

सवैया ।

पाल कही महि मंडल के खल घालक, वैरिन के सिर गाजो ॥
मोहन मूरति, दीन दया करि, मित्रन के मन मौहि विराजो ॥
चंद्रकला सरदार महीपति, नंद तुम्हारे महा छबि छाजो ॥
जो लगि है अहि पै महि तौ लगि राजकुमार महा सुख साजो ॥ ३ ॥

चौपाई ।

जब लगि महि रह अहिपति सीसा ।
गंगहि सिर पर रखे गिरीसा ॥

तब लगि श्री महाराज कुमारी।
कहहु सुमेरु सिंह सुख भारी ॥ ४ ॥

वर्तमान समय की पहेली।

आधो दरजी और बजाज। राखत हैं अपने हित काज।
आधो आवै जाके हाथ। रहैं सकल जन ताके साथ ॥
सगरो जाके सदन रहाय। महा प्रतापी पुरुष कहाय ॥
है कारो दृढ कहौ बिचारि। चंद्रकला नतु मानौ हारि ॥ १ ॥

गजराज।

कारो है पै काग न होई। भारो है पै शैल न सोई ॥
करे नाक सौं कर को कार। अर्थ करो कै मानो हार ॥ २ ॥

गज।

आदि कटे तें दिल हो जावै। मध्य कटे तें सर सुख ध्यावै ॥
अंत कटे तैं होय सुनारी। मैं यह अद्भुत बात बिचारी ॥
तीन वरन को जासु शरीरा। है जग पूज्य कहत मति धीरा ॥
याको जलदी अर्थ बतावो। चंद्रकला नतु चुप हो जावो ॥ ३ ॥

वामन।

आदि भाग व्है जिहिं कर मौंही। सो सब जग बस कारक आही ॥
द्वितिय भाग या जगत मझारा। आवे सब के काम उदारा ॥
तृतीय भाग है अति बलवाना। प्रबल प्रतापी सूर महाना ॥
तीन भाग मिलि हैं जग पाला। चंद्रकला अति बल छबि वाला ॥४॥

सरदारसिंह जी ।

प्रथम भाग कंचन को थाना । दूजो महा वीर बलवाना ॥
तीजो लहि सब गुरुता पावै । चौथा मैं सबही मन लावै ॥
पंचम भाग सबन को प्यारो । सब मिलि भयो जगत रखवारो ॥ ५ ॥

†सुमेरसिंह महाराज कुमार ।

आदि भाग है कुल नृप नामी । दूजो रन मैं निर्भय गामी ॥
तीजो भाग भयंकर भारो । महा प्रतापी अति बलवारो ॥
तीन भाग मिलि कै इक आही । सीलसिंधु तिहि सम कोउ नाहीं ॥
है जग पालक सहित विचारा । अर्थ करो कै मानहु हारा ॥ ६ ॥

‡रघुवीरसिंह जी ।

आदि भाग है दीन दयाला । दूजो देवन को प्रतिपाला ॥
तीजो है बन राज सदाही । चौथो प्रभुता दायक आही ॥
पंचम सबही को हितकारो । धाम लगै सबही कौं प्यारो ॥
सब मिलि के सुजगत जस छावै । पंडित होय सु अर्थ बतावै ॥ ७ ॥

§राघवेन्द्रसिंह महाराज कुमार ।

कवित्त ।

सब गुनखानी महारानी रघुबीरजूकी
परम सयानी दया धाम सुख कारी है ।
जोधपुर भूपति की तनया सुहाग भरी
मति बिसतार माँहि शारदा बिचारी है ।

---

* मारवाड़ महीप † जोधपुर युवराज ‡ बूंदी भूप § बूंदी भूप के महाराज कुमार

चंद्रकला ताके भए जग सुखकार सुत
राघवेन्द्रसिंह अरिसिंह मदगारी है ।
शीलता उदारता में जन प्रतिपाल माँहि
या सम यहाँ है ऐसो और न निहारी है ॥ १ ॥
एक बार आलिन को संग लै सलोनी बाल
सूरज सुता के तीर कोऊ ना जिते रहे ।
करि असनान चीर पहरि सुढार अति
ताको मुख देखि कौलौं छबिकों रिते रहे ।
चंद्रकला ताही समै आगए अचानक ही
प्यारे मन मोहन हूँ भरि जोहिते रहे ।
इकटक होइ देखि राधिका के आनन को
चित्र के लिखे से घरी चार लों चिते रहे ॥ २ ॥

सवैया ।

जो अति दुर्लभ देवन को तन, मानुष सो निज पुण्यन पावै ॥
इन्द्रिन के सुख में लय होय जु, ईश्वर ओर न नेक लखावै ॥
चंद्रकला धिक है तिहिं जीवन, नारि सुतादिक में मन लावै ॥
है मति हीन प्रवीन बन्यो वह, काँच के लालच लाल गमावै ॥३॥
बनिता बिछुरी पति से जिनको, दुख को न सुने अरु कासों कहै ॥
छिनहूँ कल नाहिं परे कबहूँ निसिवासर जीव कसालो सहै
कहि चन्द्रकला उर लाग करौ तब ता मधि ही अति पाग्यो चहै ।
जल स्वाति सनेह सन्यो कहिकै पपिया पिव पीव पियासो रहै ॥४॥
सीतहि लेहि महा धन देय कही हित राम रमेश हरी है
जो नहिं मानहुगे मति मोर तु आपति भाँति अथाह भरी है ।
चन्द्रकला तुम ही न कछू उन बालि महाबल मृत्यु करी है

रावण नारि कहै पियसों सिय या विष बेलि प्रचंड परी है ॥५॥

मैं पठई हरि आगम हेत गई जब तो बर बेग बिथारे
का गति होय गई तहँ तोरि शरीरहू के सब होस बिसारे ।
" चन्द्रकला" दरकी अँगिया पकटा पट को न बिचार बिचारे
बोलत नाहिं न लेत उसास मिले कि नहीं कहुँ प्राण पियारे ॥६॥

नख ते सिख कों सब साजि सिँगार छटा छबि की कहि जात नहीं ।
सँग लाय अलीन लली ललचाय चली पिय पास महा उमही ।
कहिं चन्द्रकला मग आवतही लखि दौरि पिया तिय बाँह गही
नहीं बोलि सकी सरमाय लली हरखाय हिये मुसकाय रही ॥७॥

बाजत ताल मृदंग उपंग उमंग भरी सखियाँ रँग बोरी
साथ लिए पिचकी कर माहिं फिरैं चहुँघा भरि केसर कोरी ।
चंद्रकला छिरके रँग अंगन आपस माँहि करे चित चोरी
श्री बृषभानु महीपति मंदिर लाल लली मिलि खेलत होरी ॥८॥

देखी एक बाल आज न्हावती जमुन जाके,
भाल भौंहैं अर्ध चंद्र घनु निदरत हैं ॥
नैन देखि मीन कंज खंजन को दुःख होत,
नासिका कपोल उर मोर बिचरत हैं ॥
"चंद्रकला" पूर्नकलाधर सो आनन है,
चिबुक अधर दंत मन को हरत हैं ॥
कौन भाँति कब धों मिलेगी मोहि वह,
जाके उरज अमोल गोल घायल करत हैं ॥९॥

सवैया ।

बाल वियोग परी मुरझाय हुती
थित आलिन मैं सिर नाय कै ।

मोहन के गुनगान अपार
बखानत ही सखियाँ भल भाय के।
चंद्रकला तबही प्रिय आगम
आय कह्यो सखि ने समझाय के।
आवत दूरहि तें लखि दौरि
रही पिय के हिय सों लिपटाय के ॥१०॥

कबित्त।

सुंदर सिँगार साजि अमल अलीन माँहि
बैठी वृषभान सुता उपमा न ताकी है।
ताहि समै आए घनश्याम के सखान संग
जिनकी अनेक कामदेव सम झाँकी है।
चन्द्रकला देखि तिन्हैं बोली ललचाय लली
त्रिभुवननाथ कृपा मोपै महा थाँ की है।
तुमही करत प्रजा रचना रु पालिना हूँ
छिन में करत प्रलै रोरी दीठी बाँकी है ॥११॥

सवैया।

कपिनाथ महाबल बालि नसाय
कर्यो कपिराज सुकण्ठ सुभाती।
दल बानर भालुन को संग लेय
गए निरखी अति लंक कपाती॥
कहि चन्द्रकला हनि रावन को
बुलवाय लई सियही हरषाती।
मुसकावत बाल बिनोद भरी

जबही जब राम लगावत छाती ॥ १२ ॥
ध्यान करे तुम्हरो निसि वासर
नाम तुम्हार रटै बिसरै ना ।
गावत है गुन प्रेम पगी मन
जोवत है छिन दीठि टरै ना ॥
चन्द्रकला वृषभानु सुता
अति छीन भई तन दीखि परै ना ।
बेग चलो न बिलंब करो
अति व्याकुल है वह धीर धरै ना ॥१३॥

कवित्त ।

साँवरे सलोने मनमोहन लला के हेत
त्यागी कुल कान हम जग झर झारे हैं ।
सुत, भरतादि, देह, गेह, सों सनेह त्यागि
भई लवलीन तन, मन, धन वारे हैं ॥
चन्द्रकला कहै ऊधो वेहू हमहीं में लीन
तन मन लाय होत रहे निरधारे हैं ।
तुमसे बसीठ आए जोग को सँदेस लाए
अब हम जानी हेत हमरे बिसारे हैं ।

(७) चाँपादेरानी ।

जैसलमेर के राव लहरराज की बेटी और बीकानेर के राजा रायसिंह जी के भाई पृथ्वीराज जी की रानी थीं परन्तु इनसे पहिले पृथ्वीराज जी का विवाह रानी लालादे जी से हो चुका था कहते हैं कि लालाँजी भी भटियानी ही थीं और कोई कोई तो उनको चाँपादे की बहन ही बताते हैं परन्तु जैसलमेर के इतिहास से यह

बात सिद्ध नहीं होती उसमें तो राव लहरराज जी की ३ ही बेटियाँ. गंगा, चाँपा और नाथी, लिखी हैं।

पृथ्वीराज जी जैसे रसज्ञ कवि थे वैसेही लालाँ जैसी रसीली रमणी भी उनको मिल गई थी जिसके रस रेलों को वे नवेले नायक अति तुष्टि दायक समझ कर दिन रैन बड़े सुख चैन से व्यतीत करते थे परन्तु दुर्दशा आने से लालाँदे रानी भरी जवानी में थोड़ी सी वीमारी भुगतकर मर गईं पृथ्वीराज जी को बड़ा भारी दुःख हुआ और जब उन्होंने उसके नाज़ुक और सुकुमार शरीर को आग में जलते देखा तो व्याकुल होकर यह दोहा कहा—

तो राँध्यो नहिं खावस्याँरे ! बास दे निसड्ड ।
मोदेखत तू बालिया, लाल रहंदा हड्ड ॥ १ ॥

वे उस दिन से आग की पकी हुई कोई चीज नहीं खाते थे इस से मरणप्राय हो गए निदान लोगों ने समझाकर उनका विवाह चाँपादे रानी से कराया ये रूप, लावण्य, गुण और जोवन में लालाँ से भी बढ़ चढ़ कर थीं इनके मिलते ही पृथ्वीराज जी का दिल जो उखड़ा हुआ था ठिकाने आगया दोनों बड़े प्यार से प्रसन्नता पूर्वक रहने लगे चाँपादे जी के देखे बिना पृथ्वीराज जी को छिन भर भी कल नहीं पड़ती थी और इस विषय में उन्होंने कई दोहे भी बनाए हैं जिनमें से १ यह है—

चाँपा तू हर राज री । हँस कर बदन दिखाएं।
मो मन *पात †कुपात ज्यों । कबहूँ तृप्त न थाए ॥ १ ॥

पृथ्वीराज जी बड़े हरिभक्त और कवि थे उनकी संगत से चाँपादे को भी कविता करनी आगई थी और वे कभी कभी काव्य रचना में उनको सहारा भी दे देती थीं।

जिन दिनों में कि पृथ्वीराज जी रुक्मिणीमंगल डिङ्गल भाषा में बनाते थे तो एक समय राजा भीष्म के विलास भवनों का बर्णन

---

* चारण कवि।

† कुकवि।

करते हुए "चंदनपाट चंदनपाट" बारंबार उच्चारण करने लगे क्योंकि आगे का पद नहीं जुड़ता था चाँपादे ने यह सुन कर तुरंत कह दिया "कपाटहीचंदन" जिससे यह पूरा चरण यों बन गया—

चंदन पाट कपाटही चंदन।

चाँपादे जी जितनी चतुर थीं उतनीही चंचल भी थीं एक दिन पृथ्वीराज जी बालों में कंघा कर रहे थे चाँपादे उनके पीछे आ खड़ी हुईं जब पृथ्वीराज जी ने एक सफ़ेद बाल डाढ़ी से उखाड़ा तो मुँह फेर कर हँसने लगीं पृथ्वीराज जी ने काँच में परछाँई देख कर पीछे देखा और शर्माकर तुरंत ये दोहे कहे—

पीथल धोला आवियाँ। बहुली लग्गी खोड़॥
पूरे जोबन पदमणी। ऊभी मूँह मरोड़*॥ १॥
पीथल पली टमुक्कियाँ। बहूली लगगई खोड़॥
सामीनी हाँसा करे। ताली दे मुख मोड़†॥ २॥
पीथल पली टमुक्कियाँ। बहुली लागी खोड़॥
मरवण मत्त गयंद ज्यों। ऊभी मुख्य मरोड़॥

चाँपादेने उनके मन की ग्लानि मिटाने को कहा कि नहीं साहिब जी यों नहीं, यों है।

प्यारी कहे पीथल सुनो। धोलाँ दिस मत जोय॥
नराँ नाहराँ ‡ डिगमराँ। पाकाँ ही रस होय॥ १॥
खेड़ज पक्काँ धोरियाँ। पंथज गउघाँ पाव॥
नराँ तुरंगाँ बनफलाँ। पक्काँ पक्काँ साव§॥ २॥

---

* पृथ्वीराज स्वेत बाल चमक आए बड़ी खोड़ लग गई जिससे पूरे जोबन वाली कामिनी मुंह मोड़े खड़ी है।

† स्वामिनी हँसी करती है मुँह मोड़ कर ताली देती है।

‡ दिगंबर (जोगी आदि)

§ खेती पक्के बैलों से ही होती है। और रस्ता भी पक्के ऊँटों के पावों से ही कटता है नर तुरंग और बन फल पक कर ही पूरे पक्के होते हैं।

यह दोहा मानो राजा मुंजराज के इस श्लोक का जवाब है जो उन्हों ने रानी मृणालवती को प्रसन्न करने के लिये कहा था जब कि वह मुंजराज की तरुणा और अपनी वृद्धावस्था देखकर मन में उदास हुई थीं।

यदिशर्कराशत खण्डा जाता तदपि मिष्टा।
तन्नोपीयं चूर्णिता मर्दिता मिष्टैव ॥ १ ॥

(८) छत्रकुँवरबाई।

ये रूपनगर के राजा सरदारसिंह जी की बेटी और नागरीदास जी की पोती थीं जैसा कि इनके बनाए ग्रंथ प्रेमविनोद के इन अन्तिम दोहों से पाया जाता है।

दोहा।

रूपनगर नृप राजसी, जिन सुत नागरिदास।
तिन पुत्र जु सरदारसी, हौं तनया मैं तास॥
छत्रकुँवरि मम नाम है, कहिबे को जग माँहि।
प्रियासरनदासत्व तें, हौं हित चूर सदाँहि॥
सरन सलेमाबाद की, पाई तासु प्रताप।
आश्रय है जिन रहसि के, बरन्यो ध्यान सजाप॥

कृष्णगढ़ के इतिहास में इनको महाराज सरदारसिंह जी की खवास अर्थात् उपस्त्री की बेटी लिखा है और यह भी लिखा है कि इनका विवाह महाराजा बहादुरसिंह जी ने वैसाख सुदि १३ संवत् १७३१ को कोवड़े के खीची *गोपालसिंह जी से किया था।

छत्रकुँवरिबाई भी सुंदर कँवरि बाई की नाँई सलेमाबाद के

---

* गोपालसिंह का नाम कोटड़े अर्थात् राघोगढ़ के खीची राजों की पीढ़ियों में नहीं मिलता कदाचित खवासवाल होने के कारण से नहीं लिखा होगा।

श्री जी की चेली थीं और सत्व भाव से भगवत को भजती थीं जिसका परिचय प्रेमबिनोद में पूर्ण रीति से मिलता है।

प्रेमविनोद की रचना संवत् १८४५ शाके १७१० में असाढ़ सुदि ३ बृहस्पतिवार को समाप्त हुई थी इसमें जो कविता है वह इस प्रकार की है।

दोहा अरील।

श्याम सखी हँसि कुँवरि दिस, बोली मधुरे बैन।
सुमन लेन चलिए अबै, यह बिरियाँ सुख दैन॥
यह बिरियाँ सुखदैन, जान मुसकाय चलीं जब।
नवल सखी करि कुँवरि, संग सहचरि बिथुरी सब॥
प्रेम भरी सब सुमन चुनत, जित तित साँझी हित।
ये दुहुँ प्रेम अग फिरत, निज गति मति मिश्रित॥
गरबाही दीने कहूँ, इक टक लखन लुभाहिं।
पगपग द्वैद्वै पेड पै, थकित खरी रहि जाहिं॥
थकित खरी रहि जाहिं, दगन दग छूटे न छूटें॥
तन मन फूल अपार, दुहूँ फल लाह सु लूटें॥
नैनन नैनन सुगल, बैन सों नहिं बनि आवे॥
उमडत प्रेम समुद्र, थाह तिहिं नाहिन पावै॥
फूलन सझा समय अति, फूलि सुमन सुरग॥
फूले नैन सुदुहुन के, फूल समात न अग॥
फूलि समात न अग, रंग तिहिं सुगल मम्होरें॥
साँझी सुरत सुआय, लेन तब सुमन बिचारें॥
प्यारी झमक झुकात, डार झूमत अलबेली॥
कर पहुँचे तहँ नाहिं, चढावत कंध नवेली॥
लेत सुमन बेलीन तें, मोतिन की सी बेलि॥

तृन तोरत लखि छकि तहाँ, नागरि सखी नवेलि ॥
नागरि सखी नवेलि, अपन पौ सर्व निवारें ॥
सुमन गह्यावत सघन, झूम निरखोरें डारें ॥
अरुझत प्यारी वसन, जहाँ द्रुम बेलिन माहीं ॥
सुरझावत नव नारि, अपुन उरझन उरझाहीं ॥
अरुझन में अरुझन नवल, गुरुजन रंग अपार ॥
ज्यों डारन सों डार त्यों, उर हारन सों हार ॥
उर हारन सों हार, अलक अलकन लपटानी ॥
नैन नैन बैनान, युगल की अकथ कहानी ॥
प्रेम सिंधु छिल छलाचि, लहरि इति अति सरसानी ॥
कुँवरि सकुचि, सतराय. झिझिक ढिग सखिन बुलानी ॥
प्यारी छबि सतरान लखि, नव नागरि मुसिकाय ॥
विवस प्रेम दृग गति छकी, इक टक रही चिताय ॥
इक टक रही चिताय, अमल अनउतरण छाकी ॥
इत चितवन सकुचान भरी, इत प्रेमहि पाकी ॥
जुरन घुरन पुनि दुरन, मुरन लोचन अनियारे ॥
नवनागरि उर मैन, बान लगि फूटें दुसारे ।
यह छबि लखि लखि रीझिकै, प्रेम पूर छकछाय ॥
कहत नई किंहु दूर सों, हँसिके दुहुँन सुनाय ॥
हँसिके दुहुँन सुनाय, कहत बिध मिलन मिलाई ॥
द्रुमवेलिन के मेल, फूल अति छल छबि छाई ॥
यह सुनि नव नागरिजु, प्रिया मुख लखि मुसकाई ॥
कहत भई हँसि वाह जु, अहा मोहन की पाई ॥
मिला मिली की रीत जो, चलन लगी इहिं बाग ॥
रलिये तिहि सामिल तहाँ, जो प्रसंग जिहिं जाग ॥
जो प्रसंग जिहिं जाग, तिहीं बानिक गति गहिए ॥

अलि मनोज चर फिरत, दुहाई देत सुल्हिए ॥
मिल बिछुरन न सलाह, लाह देहैं ग्रह साँझी ॥
मिलै मेल है रंग, अनंग रस सुरहैं माँझी ॥
कछु मुसकत सतराय कछु, कह्यो कुँवरि सकुचात ॥
बात तिहारी ये कछू, मोहिं न समझी जात ॥
मोहि न समझी जात, कहा झक झोर मचाई ॥
साँझी खेलन बेर, येहै अब नियरी आई ॥
कहिहैं गोप कुँवारि, गई कब की कित न्यारी ॥
गेह चलन की बेर, अबै क्यों करन अवारी ॥

(९) जामसुता जाडेची जी श्री प्रतापबा ।

गुजरात अन्तर्गत जामनगर राज्य के जाम श्री *रिड़मल जी की राजकुमारी जोधपुर के महाराजा श्री तख़तसिंह जी की रानी श्री जाड़ेचीजी जो अब दादी जाड़ेचीजी साहिब कहलाती हैं इस कलिकाल में बड़ी पुन्यात्मा और धर्मपरायणा स्त्रीरत्न हैं इनका जन्म आसोज बदी १२ बुधवार सवत् १८६१ को झाली रानी सोनीबा में हुआ था और विवाह वैसाख सुदि ११ संवत् १६०८ को महाराजा श्री तख़तसिंह जी से हुआ महाराजा स्वयं तो नहीं गए थे बरात के साथ अपना खाँड़ा भेज दिया था उसी से इनके भाई जाम श्री †बीभा जी ने फेरे खिलाकर डोला जोधपुर को भेजा जिसका मान बढ़ाने के लिये महाराजा ५ कोस अगवानी आए और गाँव मोगड़े में विधि पूर्वक विवाह करके इनको जोधपुर के गढ़ में ले गए इस विवाह में जाम साहिब का इतना

---

* जाम जस्साजी के दत्तक पुत्र।

† जाम बीभा जी का जन्म वैशाख सुदी ४ रविवार सम्वत् १८८३ का था और फागुण सुदी ३ सोमवार सम्वत् १६०८ को अपने पिता के पीछे गद्दी पर बैठे थे जिस के ३ महीने बाद यह बिवाह हुआ था मारवाड और गुजरात में सम्वत् चैत से नहीं बदलता सावन और कार्तिक से बदलता है—

रुपया खर्च हुआ था कि देखने वाले अब तक भी कहते हैं कि जामनगर से जोधपुर तक चाँदी की नदी बह गई थी।

पूस सुदी १२ संवत् १६१० को इनके इकलौते कुँवर महाराज बहादुरसिंह जी का जन्म हुआ उस समय भी जोधपुर और जामनगर में बड़ा उत्सव हुआ था।

महाराजा श्री तख़तसिंह जी की बहुत सी रानियाँ थीं परन्तु संवत् १६२५ के दुर्भिक्ष काल में इन दादी जाड़ेची साहब का नाम अधिक विख्यात हुआ क्योंकि उस समय इन्हों ने मारवाड़ की प्रजा की रक्षा में अति उदारता की थी जिसके विषय में देशी कवियों की कविता तो प्रसिद्ध है ही परन्तु अँगरेज़ी सरकार में भी बहुत प्रशंसा हुई थी।

राजपूताने की रिपोट सन् १८६६ में मारवाड़ की अकाल पीड़ित प्रजा की दुर्दशा दिखाकर लिखा है कि सब से अधिक उदारता रानी जाड़ेचीजी ने की वे प्रति दिन ७ मन पका हुआ खाना बाँटा करतीं और रात्रि में प्रत्येक भले गृहस्थ को जो लज्जा से दिन में माँग नहीं सकता था झोली भर धान दिला देती थीं।

प्रतापकुँवर ने पदरत्नावली के अंत में लिखा है कि ठेट विलायत से खलीता आया था जिसमें लिखा था कि जिस समय में माता अपनी संतान को पालना न कर सकी उस समय में आपने प्रजा का पालन किया इससे सरकार बहुत प्रसन्न हुई है।

माघ सुदी १५ संवत् १६२९ को महाराजा श्री तख़तसिंह जी के स्वर्गारोहन से इनको विधवा होना पड़ा उस शोकमय समय में एक महाराज श्री बहादुरसिंह जी ही इनके जीवनाधार थे सो भी अधिक मद्यपान करने से संवत् १९३६ में पोष सुदी ९ को काल प्राप्त हो गए तब इन्हों ने उनके बालक पुत्र महाराज जीवनसिंह जी को पाल पोष कर बड़ा किया तो वे भी कातिक सुदि ६ संवत् १९५८ को काल के कराल चक्र में आकर अपुत्र पितृलोक

में जा बसे उधर इनके प्यारे भाई जाम बीभा जी* भी वैसाख सुदी ४ संवत् १६५१ को धाम प्राप्त हो चुके थे ऐसे ऐसे लगातार असह्य दारुण दुखों के आ पड़ने से बड़े बड़े विद्वानों का चित्त चल विचल हो जाता है और नास्तिक लोग तो मुक्त कंठ से कहने लगते हैं कि "कर धम्म फूट करम" परन्तु दादीं श्री जाड़ेचीजी तो आस्तिक हैं और धर्मज्ञ हैं उन्हों ने सुख दुख को समान और प्रारब्ध के आधीन समझकर अपनी पुन्य प्रकृति और धर्म निष्ठा में कुछ भी न्यूनता नहीं पड़ने दी और उसी तरह धर्म, पुण्य और परोपकार में तत्पर हैं यह बात इनके बनाए हुए निम्न लिखित निवानों और देवमंदिरों से जानी जाती है जो इनके पुन्य का परिचय प्रलय के समय तक देते रहेंगे।

१ आसापूरा देवी का मंदिर, जो जाड़ेचों की कुलदेवी हैं।
२ रामाहोल्ला, रामसनेही साधुओं का १ बड़ा धर्मस्थान।
३ देगावर जी के तलाब पर बाग़, भवन और कूप।
४ मीठे पानी का कुआ राममोहल्ला में।

इनके सिवाय जोधपुर में जितने ब्रह्म भोज इन्हों ने किए हैं उतने कम किसी रानी या माजी ने किए होंगे इन ब्रह्मभोजों की संख्या ३१ तक पहुँचती है जिन में कई लाख रुपया ख़र्च हुआ था—

ऐसी ही धर्मात्मा इनकी भतीजी जाम श्री बीभा जी की राज कुमारी श्री राजबा भी हैं जिनका विवाह जेठ सुदी ३ संवत् १९११ को जोधपुर के महाराज कुमार श्री जसवन्तसिंह जी के साथ †जालोरगढ़ में वैसही ठाटबाट से हुआ था और जो संवत् १९२६ से संवत् १९५२ तक मारवाड़ की महारानी कहलाती रही थीं और

* जाम श्री बीभा जी का जीवन चरित गुजराती भाषा के ग्रन्थ बीभाविलास में कवि बीजामडू ने बनाया है जिसमें सम्वत् १९३१ तक का वृत्तान्त है फिर वे तो सम्वत् १९३२ में काल प्राप्त होगए और पीछे का वृत्तान्त उनके पुत्र मूलराज ने बढ़ा कर उस ग्रन्थ को पूर्ण किया और १९४९ में जाम साहिब की आज्ञा से छपवाकर प्रसिद्ध कर दिया—

† जालोर जोधपुर से ३५ कोस दक्षिण में है जहाँ जामनगर से डोला आया था।

अब माजी श्री जाड़ेची कहलाती हैं इन्होंने लाख रुपये से अधिक लगाकर अपने प्रतिष्ठित पति के नाम पर जोधपुर स्टेशन के पास मुसाफ़िरों के लिये जसवंत सराय बनाई है और अब उसी के सामने वैसीही विशाल और विस्तीर्ण दूसरी सराय अपने नाम की भी बनवा रही हैं।

दादी श्री जाड़ेची जी साहिब चतुर्भुज भगवान की परम भक्त हैं और उनका पूजन स्मरण तथा भजन तन मन धन से करती हैं उनके ध्यान और स्तुति के पद और हरजस भी बनाती हैं जिन में से बहुत से "प्रतापकुँवर पदरत्नावली" नामक पुस्तक में छपे हैं

यह पुस्तक हमको भी अपने प्रतिष्ठित पड़ोसी रामसनेही साधु प्यारा रामजी की कृपा से प्राप्त हुई।

इस पुस्तक में कुछ कविता छगन* विप्र और सुकवि श्याम† की भी मिली हुई है जो दादी श्री जाड़ेची जी और महाराज श्री बहादुरसिंह जी के गुणों की प्रशंसा में है परन्तु हम उसको और स्थान‡ में लिखने के वास्ते छोड़ कर यहाँ केवल कुछ पद जाम-सुता दादी जी श्री जाड़ेची जी के बनाए हैं उसमें से उद्धृत करके लिखते हैं।

राग खंभाइच।

वारी थारा मुखड़ारी श्याम सुजान ॥

मन्द मन्द मुख हास्य विराजे। कोटिक काम लजान ॥
अनियारी अँखियाँ रसभीनी। बाकी भौंहैं कमान ॥
दाड़िम दसन अधर अरुनारे। बचन सुधा सुख खान ॥
जामसुता प्रभु सैाँ कर जोरे। हो मेरे जीवन प्रान ॥ १ ॥

---

* छगन कवि, छगनीराम व्यास जोधपुर निवासी।

† श्याम कवि, जयसिंह ब्रह्मभाट के पुत्र जामनगर में हैं इन्होंने अन्योक्तिविलास, वैराग्यशतक और उपदेशबावनी, बनाई है।

‡ कविरत्नमाला में।

लगन म्हारी लागी चतुरभुज नाम ॥
श्याम सनेही म्हारो जीवन येही । औरन से क्या काम ॥
नैन निहारूँ पल न विसारूँ । सुमरूँ निसदिन श्याम ॥
हरि सिमरन ते सब दुख जावे । मन पावे विसराम ॥
तन मन धन नोछावर कीजे । कहत दुलारी जाम ॥ २ ॥

सोरठ ।

चतुरभुज हीँडत श्याम हिँडोरे ॥
कंचन खंभ लगे मणि माणक । रेसम की रंग डोरेँ ॥
उमड़ि घुमाड़ि घन बरसत चहुँ दिस । नदियाँ लेत हिलोरेँ ॥
हरि हरि भूमि लता लपटाई । बोलत कोकिल मोरेँ ॥
बाजत बीन पखावज बंसी । गान होत चहुँ ओरेँ ॥
जामसुता छबि निरख अनोखी । वारूँ काम किरोरेँ ॥ ३ ॥

जैजैवंती ।

प्रीतम हमारो प्यारो श्याम गिरधारी है ।
मोहन अनाथ नाथ , संतन के डोले साथ
वेद गुण गावे गाथ , गोकुल विहारी है ॥
कमल बिसाल नैन , निपट रसीले बैन
दीनन को दान देत , चार भुजा धारी है ॥
केशव कृपानिधान , वाही से हमारो ध्यान
तन मन वारूँ प्राण , जीवन मुरारी है ॥
सुमरूँ मैं साँझ भोर , बार बार हाथ जोर
कहत प्रताप कोर , जाम की दुलारी है ॥ ४ ॥

कालिंगड़ा ।

प्रीतम प्यारो चतुरभुज बारो री ।
हिये तें होत न न्यारो मेरे । जीवन नंद दुलारो री ॥
जामसुता को है सुख कारो । साँचो श्याम हमारो री ॥ ५ ॥

परज ।

दरस मोहि दीजे चतुरभुज श्याम ।
करि किरपा करुणा निधि मेरे , सफल करो सब काम ॥
पाव पलक विसरूँ नहिं तुमको , याद करूँ नित नाम
जामसुता की यही बीनती , आन करो उर धाम ॥ ६ ॥

झंझोटी ।

भज मन नंदनंदन गिरधारी ।
सुख सागर करुणा को आगर । भगत वछल बनवारी ॥
मीराँ, करमा, कुबरी, सबरी । तारी गौतम नारी ॥
वेद पुरानन में जस गायो । ध्यायें होवत प्यारी ॥
जामसुता को श्याम चतुरभुज । लेगो खबर हमारी ॥ ७ ॥

जंगला ।

सखीरी चतुरभुज श्याम सुंदर से । मोरी लगन लगीरी ॥
लाख कहो अब एक न मानूँ । उनकी प्रीत पगीरी ॥
जा दिन दरस भयो ता दिन तें । दुबिधा दूर भगीरी ॥
जामसुता कहे उर बिच उनकी । भगती आन जगीरी ॥ ८ ॥

बिहाग ।

मोमन परी यह ही बान ।
चतुरभुज के चरण परिहर , ना चहूँ कछु आन ॥
कमल नैन विसाल सुंदर , मंद मुख मुसकान
सुभग मुकट सुहावनो सिर , सोहे कुंडल कान ॥
प्रगट भाल विसाल बिराजत , भौंहैं मनहु कमान
अंग अंग अनंग की छवि , पीत पट पहिरान ॥
कृष्ण रूप अनूप को मैं , धरूं निस दिन ध्यान
सदा सुमरूं रूप पल पल , मीन ज्यौं जल आन ॥
रचत, पालत, हरत, सब जग , कला कोटि निधान
जामसुता परताप के , भुजचारों जीवन प्रान ॥ ९ ॥

(१०) झीमा ।

ये जाँगलू* देश के चारणबीठू की बहिन अति बाचाल और कविता में परम रसाल थीं एक समय अपनी जाति की वृत्ति से जाचना करने को गनगागरोह† में गईं वहाँ के राजा खींची अचलदास‡ जी के पूछने पर इन्होंने अपने देश के धनी साँखली§ राव भीमसी जी की बेटी ऊमाँदे साँखली के बखान ऐसे धड़ल्ले से किए कि अचलदास ने मोहित होकर इनको ४ घोड़े दिए और अपने प्रधान साथ किए सो झीमा ने घर आकर अपने भाई बीठू के द्वारा उनको राव भीमसी जी से मिलाया और अचलदास जी का विवाह ठहराकर टीका भिजवाया अचलदास जी बड़ी धूम धाम से बरात सज कर आए और ऊँमादे साँखली को ब्याह कर ले गए परन्तु उनकी पहिली रानी लालाँदे मेवाड़ी ने उनका ऊँमादे के पास आना जाना

---

* जहाँ अब बीकानेर का राज्य है ।
† यह स्थान अब कोटा राज्य में है ।
‡ पीपा जी भक्त के बड़े भाई ।
§ पवाँरों की एक शाखा ।

बंद कर दिया लालाँदे मेवाड़ी चीतोड़ के राना मोकल जी की बेटी थीं और अचलदास जी को अपने बस में रखती थीं ।

ऊँमादे को बड़ा दुख हुआ और कई वर्ष उन्होंने बड़े शोक संताप से काटे उस दशा में झीमा के सिवाय और कोई उनके सुख दुख की साथिन नहीं थी झीमा का जी भी बहुत जलता था वे कभी बिरह भाव के दोहे कह उनको रुलातीं और कभी उपदेश करके उनके विक्षिप्त चित्त को धीरज देती थीं निदान एक दिन ऊँमाजी ने झीमा से कहा कि बाई तुम कोई उपाय क्यों नहीं करती हो तुम्हारी बीन सुनकर तो जङ्गल के भागते हुए हरिन भी खड़े रह जाते थे रावजी को क्यों नहीं सुनाकर मेरे बस में कर देती हो ? झीमा ने कहा कि बाई जी मैं रावजी को एक बेर देखूँ तो सब ठीक करूँ ऊँमादे जी ने कहा कि इसका भी तुम्हीं कोई उपाय करो झीमा ने सोचते सोचते वार्तालाप में किसी स्त्री के सामने ऐसी चर्चा चलाई कि ऊँमादे जी के पास रत्नों का एक ऐसा उत्तम हार है कि वैसा लालाँदे जी के पास न होगा यह बात लालाँदे के कानों तक भी पहुँची और उन्होंने अपनी सहेली ऊमाँदे जी के पास भेजकर हार देखने को मँगाया और पसंद करके कहा कि जो एक रात मेरे पास रहने दो तो मैं रावजी को दिखा कर लौटा दूँगी ऊँमादे जी ने कहा कि तुम एक रात रावजी को मेरे पास भेजो तो हार दूँ। लालाँदे जी ने स्वीकार करके हार लिया और सोरह शृङ्गार सजके वह हार पहिना और रावजी की सेज में गईं रावजी ने देखकर कहा कि धन्य है मेवाड़ देश जहाँ ऐसे ऐसे रत्नों के आभूषण हैं लालाँदे ने कहा कि आप कल रात को साँखली के महल में जाना परन्तु योंही बैठकर चले आना कमर मत खोलना।

अचलदास जी इस बात का बचन देकर ऊँमादे साँखली के विलासभवन में गए आधी रात तक तो इधर उधर की बातें करने रहे फिर हथियार बाँधेही पौढ़ गए ऊँमादे पगचपी करने लगी झीमा ने यह रङ्ग देख कर बीन छेड़ी और असावरी राग में यह दोहे गाए—

धिन* उमादे साँखली, तैं पिव लियो मुलाय† ।
सात बरसरो बीछड्यो, तो किम‡ रैन बिहाय ॥ १ ॥
किरती§ माथे ढल गई, हिरनी¶ लूँबा* खाय ।
हार सटे† पिव आणियो,‡ हँसे न साँमो थाय§ ॥ २ ॥
चैनण[1] काठरो[2] ढोलियो । किस्तूरियाँ[3] अवास[4] ॥
धण जागे पिव पौढ़ियो । बालूँ[5] आँ[6] घरबास ॥ ३ ॥
कालाँ लाल मेवाडियाँ । ऊमा तीज बले भार ॥
अचल ऐराक्याँ ना चढ़े । रोढ़ाँ[11] रो असवार ॥ ४ ॥
काले अचल मोलैवियो । गज घोड़ाँ रे मोल ॥
देखत ही पीतल हुओ । सोकड़ल्याँ रे बोल ॥ ५ ॥
धिन्य दिहाड़ो धिन घड़ी । मैं जाण्यो थो आज ॥
हार गयो पिव सो रह्यो । कोइ न सरियो काज ॥ ६ ॥
निस दि[न] गई पुकारताँ । कोइ न पूँगी दाव ॥
सदा [ब]िलखती धण रही । तोहि न चेत्यो राव ॥ ७ ॥
ओढ़नँ[16] झीणाँ[17] अंबराँ । सूतो खूँटी ताँण ॥
नातो जाग्या बालमो । ना धन मूँक्यो माँण ॥ ८ ॥
तिलकन भागो तरुणि को । मुखे न बोल्यो बैण ॥
माण कलड़ छूटी नहीं । अजेसँ[21] काजल नैण ॥ ९ ॥
खीची बे चाँहे मखी । कोई खीची लेहु ॥
काल पचासाँ में लियो । आज पचीसाँ देहु ॥ १० ॥
हार दियाँ [22]छंदो कियो । मूक्यो माण मरम्म ॥
ऊमाँ पीवन चक्खियो । आडो लेख करम्म ॥ ११ ॥

---

* धन्य † मोल लिया ‡ कैसे § कृतिका ¶ मृगसिर * खाने † बदले ‡ लाया गया § सन्मुख ।

१ चन्दन २ पलंग ३ कस्तूरी की ४ सुगन्ध या कस्तूरी से सुगंधित भवन ५ जली ६ सोया हुआ ७ जलाऊं ८ यह ९ ज़बर्दस्त १० घोड़ा ११ टट्टू १२ मोल लिया १३ साके १४ दिन १५ पहुँचा जगा १६ ओढ़कर १७ महीन १८ कपड़े १९ छोड़ा २० खंडित हुआ २१ अभी तक २२ आधीनता, खुशामद ।

ऐसे कामोत्साह उत्तेजन करने वाले दोहे सुनकर भी अचल-दास जी ने हथियार नहीं खोले और अपना वचन निबाहते रहे निदान तड़का हो गया और लालाँदेजी की छांकरी उन्हें के जाने को आ खड़ी हुई तब ऊँमादेजी ने कहा।

माँग्या लाभे जव चणा । माँगी लभे जुवार ॥
माँग्या साजन किमि मिले[1] । गहेली[2] मूढ गँवार ॥ १ ॥
पहो[3] फाटी पगड़ो हुओ । त्रिछँरण रां है बार ॥
ले सखि थारो बांल्मो । उरदे म्हारो हार ॥ २ ॥

झीमा यह सुनते ही झुँझला कर उठीं बीन फेंककर पलँग पर पौढे हुए अचलदासजी को झंझोड़ने लगीं उन्होंने कहा मैं उठता हूँ परंतु तुमने यह क्या गाया कि ।

हार सटे पिव आनियो ।

झीमा ने बिगड़कर कहा बड़े ठाकुर, तुम को तो लालाँजी ने बेच दिया है और हमने १ हार में मोल लिया है हमारा हार भी गया और तुम भी गए तो हमारा क्या काम निकला । तब अचल-दासजी ने रोस करके कहा कि क्या हमको लालाँ मेवाड़ी ने बेच दिया है झीमाँ ने कहा हाँ, और ये दोहे गाए ।

लालाँ मेवाड़ी करे, बीजो करे न काय ।
गायो झीमा चारणी, ऊमा लियो मुलाय ॥ १ ॥
पगे बजाऊँ घूघरा, हाथ बजाऊँ तुंबं ।
ऊमा अचल मुलावियो, ज्यूँ सावन की लुंबं ॥ २ ॥
आसावरी अलापियो, धिन झीमा घण जाण ।
धिण आजूणे दींहने, मेंनावणे महि राण ॥ ३ ॥

---

१ मिले २ बावली ३ तड़का ४ दूसरा ५ मोल ६ बीन ७ बरसने वाली बादली ८ आज ९ दिन १० मनाना राजा को ।

जब यह गाकर यह सब बात विस्तार पूर्वक कही तो खीची-राव ने कहा कि वाह लालांदे को हार हमसे भी प्यारा हुआ ! ऊँमा उठो दातण (दतोन) करो कहो तो लालाँ के महल में आने की सपथ कर लूँ ऊँमादे जी ने कहा कि इसमें आपका बचन जायगा जो लालाँजी को देकर आए हो यदि मेरे ऊपर ऐसीही दया मयां है तो यह बचन देजाओ कि जब मेरी सहेली बुलाने आवे तो तुरंत पधार जाना रावजी बचन देकर लालाँजी के पास चले गए ।

इस बात को सात आठ दिन बीते थे कि एक दिन आधीरात के समय लालांदे और वे चौपड़ खेल रहे थे कि ऊँमादे की सखी गई और रावजी से कहने लगी कि आपको साँखली जी बुलाती हैं अचलदास जी उठकर आने लगे तो लालाँजी ने पल्ला पकड़कर कहा कि कहाँ जाते हो रामत (बाज़ी) तो पूरी करो अचलदास जी ने कहा कि रामत पूरी क्यों करें तुम तो हमें साँखली को बेच चुकी हो सो जानती ही हो और पल्ला छुड़ाकर साँखली की सेज में आगए लालांदे जी ने रोस में भरकर कहा कि अब जो तुमसे घरबास करूँ तो रानाँजी की सोगन्द है यह सुनकर ऊँमादे और झीमा दोनों बहुत राज़ी हुईं और रावजी ऊँमादे के पास रहने लगे ।

इस प्रकार झीमा चारिणी ने अपनी कौतुकमयी राजक्रिया और सकाज कविता से ऊँमादे साँखली का संकट दूर कर दिया और ऐसी कीर्ति पाई जो ५०० सौ वर्ष से आज तक इतिहास में थिर है ।

(११) पंडितानी तीजाँजी ।

राजधानी जयपुर से उत्तर को १२ कोस 'महार' नाम एक गाँव है वहाँ आदिगौड़ जाति के ब्राह्मण जीवनराम जी बड़े ज्योतिषी थे उनके पुत्र पंडित मन्नालाल जी की धर्मपत्नी तीजाँ जी बड़ी पण्डितानी हैं श्लोक और भाषा कविता के बनाने में भी निपुण हैं इन्होंने १९५३ में जयपुर निवासी पण्डित लक्ष्मीनारायण शर्मा के कहने से लघुपाराशरी जैसे कठिन ग्रन्थ की भाषा टीका बहुत

सुन्दर और सरल बनाई है उस में से यह कुछ नमूना इनकी कविता का उद्धृत कर के यहाँ लिखते हैं—

दोहा ।

हम पाराशर शास्त्र को, आश्रय ले मतिकूल ।
ऋक्षपाक सूचक करत, गणक हर्ष को मूल ॥ १ ॥
फल ऋक्षासा क्रम कहूँ, विंशोतरि मत मान ।
अष्टोत्तर कूँ दूर धर, जादू सुता कह जान ॥ २ ॥

श्लोक ।

गुणबाणाङ्क चन्द्रेब्दे शुचिशुक्लदले तथा ।
पंचदश्यां भृगोर्वारे टीकेयं पूर्णतां ययौ ॥ १ ॥

दोहा ।

मोमे गुण सर अर्क शशि, विक्रमीय शुचिमास ।
मोसन तिथि कों पद्मयुत: टीका करी प्रकास ॥ १ ॥

छन्द ।

जयपत्तन तें उत्तरदिशि गुण योजन ग्राम "मुम्हार" हमारा ॥
आदि गौड़ द्विजराम पुरोहित नाम गोत्र गुण प्रवर प्रचारा ॥
श्री मज्जीवन रामगणकरवि श्वसुरसुमासु पतिव्रत पारा ॥
उनकी सुतबधु पति पद सेवक नीजानाम सं मोहि उचारा ॥ १ ॥

(१२) ताज ।

मित्रवर गोविंद गिल्ला भाई* सीहोर† से लिखते हैं कि ताज

---

* गोविन्द जिल्ला भाई चोहान ठाकुर स्वयं कवि और कविता के बड़े रसिक हैं कई सरस ग्रन्थ बना चुके हैं इनका सविस्तर वृत्तान्त कविरत्नमाला में दिया गया है ।

† सिहोर काठियावाड़ अन्तरगत भावनगर राज्य में है ।

कवि के सैकड़ों कवित्त हमारे पास हैं परन्तु उनका ठीक पता ज्ञात नहीं, कोई कहते हैं कि वे करोली के मुसलमान महाभक्त-राज थे ठाकुर जी के दर्शन किए बिना अन्न जल ग्रहण नहीं करते थे और मथुरा के कविराज चौबे विनीत (नवनीत ?) जी जो बहुधा काँकरोली (मेवाड़) में गोस्वामी बालकृष्णलाल जी के पास रहा करते हैं ऐसा कहते है कि ताज १ मुसलमान स्त्री थी और कोई शाहजहाँ बादशाह की बेगम ताजबीबी (मुमताज़ महल) को ताज कवि बताते हैं जिनकी सुरम्य समाधि ताजमहल के नाम से आगरे में बनी हुई हैं ऐसी ही और भी अनेक दन्त कथायें हैं परन्तु इसमें तो कुछ सन्देह नहीं है कि ताज कोई मुसलमान महिला थीं जिसकी साक्षी उन्हीं के बनाए हुए इस कवित्त से मिलती है ।

सुनो दिलजानी मेंडे दिलदी कहानी तुम,
दस्तही बिकानी बदनामी ही सहूँगी मैं ।
देव पूजा ठानी मैं निवाज़ हू भुलानी तजे,
कलमा कुरान साडे गुनन गहूँगी मैं ।
श्यामला, सलोना सिरताज सिर कुल्ले दिए,
तेरे नेह दाग में निदाग हो रहूँगी मैं ।
नंद के कुमार कुरबान तांडी सूरत पे,
ताड नाल प्यारे हिन्दुवानी हो रहूँगी मैं ॥ १ ॥

पुनः कवित्त ।

छैल जो छबीला सब रंग में रंगीला बड़ा,
चित्त का अड़ाला कहू देवतों से न्यारा है ।
माल गले सोहै, नाक मोती सेत सोहै कान,
कुंडल मन मोहै, लाल मुकट सीस धारा है ।
दुष्टजन मारे, सतजन रखवारे ताज,
चित हित वारे प्रेम प्रीत कर वारा है ।

नन्द जू का प्यारा, जिन कंशको पछारा यह
 वृन्दावनवारा कृष्ण साहिब हमारा है* ॥ २ ॥

(१३) तुलछराय।

ये जोधपुर के महाराजा मानसिंह जी की परदायत रानी थीं तीजा भटियानी की सेवा में रहती थीं और उनके सतसंग से ये भी राम और कृष्ण भक्ति भाव के भजन तथा पद बनाया करती थीं ये तीन गानें की चीजें इनकी बनाई यहाँ लिखी जाती हैं।

होरी।

सीताराम जी सूँ खेलूँ मैं होरी। भरलूँ गुलाल की झोरी। टे०।
सज कर आई जनक किसोरी। चहूँ बंधुन की जोरी॥
मीठे बोल सियाबर बोलत। सब सखियन की तोरी॥
हँसे हरसूँ करजोरी॥
उड़त गुलाल अबीर अली री। अंबर अरुन भयोरी॥
रंग की भरी छुटें पिचकारी। केसर कीच मचोरी॥
नैन भरि छब निरखोरी॥
लोग नगर को सबही आए। चहुँदिस भीर भरोरी॥
तुलछराय प्रभु कह करजोरे। तन मन धन अरपोरी॥
जनम को लाभ लहोरी॥

राग जंगला।

मेरी सुध लीजो जी रघुनाथ॥
लाग रही जिय केते दिन की, सुनो मेरे दिल की बात॥
मोको दासी जान सियाबर, राखो चरन के साथ॥
तुलछराय करजोर कहे, मेरो निज कर पकड़ो हाथ॥

---

* इन कवित्तों में पंजाबी भाषा के बहुधा शब्द रहने से ये बीबी कोई पंजाबिन विदित होती हैं

राग जंगला ।

सियावर श्याम लगे मोय प्यारो है ।
क्रीट मुकट मकराकृत कुंडल, भाल तिलक सुखकारो है ।
मुख की शोभा कहा कहूँ उनकी, कोटि चंद उज्यारो है ॥
गल बिच कंठी है रतनारी, बनमाला उर धारो है ।
केसरयो जामो जरकस को, दुपटो लाल लप्पारो है ॥
पीतंबरपट कट पर सोहे, पायन झंझर न्यारो है ।
तुलछराय कहे मो हिरदे बिच, आण बस्यो धनुधारो है ॥

(१४) पदमा ।

बीकानेर के इतिहास में लिखा है कि ये चारण माला जी सॉदू की पुत्री और बारहट शंकर जी की पत्नी थीं किसी कारण विशेष से बीकानेर के महाराजा रायसिंह जी के भाई अमरसिंह जी के रावल (अन्तः पुर) में रहती थीं और कुलाचार के अनुसार डिंगल भाषा के गीत कवित्त भी कहा करती थीं ।

अमरसिंह जी पहिले तो अकबर बादशाह की सेवा में रहते थे और फिर किसी बात पर बिगड़ कर बादशाही ख़ालसे के गाँवों को लूटने लगे थे जिससे बादशाह ने संवत् १६५४ में उनके ऊपर फ़ौज भेजी जब यह सेना अमरसिंह जी के राजस्थान "हावणी खेड़" पर पहुंची तो उस समय अमरसिंह जी अमल पानी करके सोए हुए थे और उनका यह स्वभाव था कि जो कोई सोते से जगाता तो उसको तलवार मार देते थे सो इस समय भी इस भय से किसी ने उनको जगाने का साहस नहीं किया तब पदमा ने १ *गीत कह कर अमरसिंह जी को जगाया और वैरियों के चढ़ आने का वृत्तांत सुनाया अमरसिंह जी अपने हाथ से सब राजपूतों को अमल पानी करा कर लड़ने को गए और सेनापति हमज़ा अरब को मार कर आप भी उसके हाथी पर काम आए रानी

---

* आग आग कल्याण आबा+यह उस गीत का अंतरा था—कल्याणमल अमर सिंह के बाप का नाम था जो बीकानेर के राव थे ।

और खवासें उनके साथ सती हुई उस समय पद्मा जी ने उनकी वीरता के बखान में कई दोहे कहे फिर वह भी उन स्त्रियों के साथ जल गईं।

हम को पद्मा जी के वे बीर रसमय दोहे तो नहीं मिले पर १ गीत राठौर नारायणधनराजोत की प्रशंसा का गीतों के १ पुराने संग्रह में बणसूर महादान जी के पास से मिला सो यहाँ लिखा जाता है।

इस गीत के आशय से पाया जाता है कि ये नारायणदास जी भी उसी समय में मुग़लों की सेना से बीरता पूर्वक युद्ध करके सिवाने के क़िले पर काम आए थे।

गयंण[1] गाज आवाज रणतूर[2] पाखर गरैं[3]।
सालुँले[4] सिंधुओ राग साथै ॥
दुरिते[5] धनराज रौ वैर जल डोहतौ[6]।
मलँफियौ[7] मूँगली[8] फ़ोज माथै ॥ १ ॥
धीरवै कमंध खगधार औ धूलियै।
अरि घंडाँ[9] जाँणती जेण ओझै ॥
मोरदल[10] सांमुहो हंस पाबासैंरा[13]।
[14]झीलियां नारियण लोह[11] जोंझै[15] ॥ २ ॥
सती पुहपाँ[16] अनै अछँर[17] अग्र सिवाँणै[18]।
जाइ नह नाम संसार जमीयो ॥
हरि[19] मिहर ही[20] चैंतो[21] हंसै[21] अविहडै[22] हरां।
कंवैध[23] नारायणो सैंरागि[24] भ्रोमियौ[25] ॥ ३ ॥

---

१ आकाश　२ लड़ाई के बाजे　३ गड़ गड़ाहट　४ झुके
५ वीर ६ मथता हुआ　७ लपका　८ मुग़ली　९ बड़ाए
१० सेना ११ वस्त्र　१२ तलवार　१३ पावासर शायद नारायणदास के स्थान का नाम है　१४ नहाया　१५ अच्छा　१६ पहुपां सती का नाम १७ अपछरा या दूसरी सती का नाम १८ एक गढ़ मारवाड़ में　१९ विष्णु का पुर　२० झूलता हुआ　२१ प्राण　२२ अविहड़ का पोता
२३ राठोड़　२४ स्वर्ग　२५ चला

(१५) बीराँ ।

बीराँ नाम की कोई स्त्री हुई है जिसके बनाए हुए पद जोधपुर पुस्तकालय के एक संग्रह ग्रंथ में जोधपुर के महाराजा श्री बख्तसिँह जी के पदों के साथ लिखे हैं बीराँ का उक्त महाराजा से संबंध रहा होगा। यह बिना निश्चय हुए कुछ नहीं कह सकते उसके पद भी महाराजा के पदों के समान कृष्ण भक्ति से परिपूर्ण हैं जिनमें से कुछ नीचे लिखे जाते हैं।

बिलावल ।

बस रहि मेरे प्रान मुरलिया । बस रहि मेरे प्रान ॥
या मुरली में काम न घोर्‌यो । उन ब्रजबासी कान ॥
मुख की सीर लई मखियन मिल । अम्मृत पीयो जान ॥
बृंदावन में राम रच्यो है । सखियाँ राख्यो मान ॥
धुनि सुनि कान भई मतवारी । अन्तर लग गयो ध्यान ॥
बीरा कहै तुम बहुरि बजाओ । नंद के लाल सुजान ॥

सोरठ ।

प्रीत लगाय जिन जायेरे सँवरिया वाला । प्रीत लगाय जिन जाय रे ॥
तुम्हरे तो संग सखि बहोतेरी । हम नहीं आई दाय रे ॥
प्रीतम को पतियाँ लिख पठऊँ । रुचि रुचि लिखूँ बनाय रे ॥
जाय बचाओ नंद नंदन सों । हिवड़ा अति अकुलाय रे ॥
प्रीति की रीति कठिन भई सजनी । करवत अंग बहाय रे ॥
जब सुधि आवे स्यामसुंदर की । विन पावक जरजाय रे ॥
मिलन मिलन तुम कहगए मोहन । अब क्यों बेर लगाय रे ॥
बीराँ को तुम दरसन दीजो । जब मोरे नैन सिराय रे ॥

(१६) प्रतापकुँवर बाई ।

ये गाँव आखण परगने जोधपुर के भाटी ठाकुर गोयंददास

जी की बाई और मारवाड़ महीप महाराजा मानसिंह जी की रानी थीं।

चंद्रवंश के यदुकुल क्षत्रियों की अनेक शाखाओं में से भाटी एक प्रबल और प्रसिद्ध शाखा है और भाटियों की भी कई शाखायें हैं उनमें से एक रावलोत है जिसकी भी दो खापें देरावरिया रावलोत और जैसलमेरिया रावलोत हैं प्रतापकुँवर के पिता गोयंद-दास जी देरावरिया रावलोत भाटी थे।

देरावरिया रावलोतों की जाति देरावर में राज करने से नियत हुई है जो एक पुरानी राजधानी प्रतापकुँवर जी के पूर्वजों की सिंध में थी और अब नवाब साहिब भावलपुर के अधिकार में है।

देरावरिये रावलोतों के मूल पुरुष रावल मालदेव थे उन से लेकर प्रतापकुँवर के पिता पर्यन्त इतनी पीढ़ियाँ हुई हैं।

१ रावल मालदेव	५ रावल दलसिंह
२ रावल भवानीदास	६ रावल पद्मसिंह
३ रावल जयसिंह	७ रावल बिसनसिंह
४ रावल रामचंद्र	८ गोयंददास

रावलोत भाटी जहाँ तक होसकता है अपनी बाइयों का विवाह गद्दीपतियों अर्थात् राजा महाराजों से करते हैं जिस से उन को उन राजों से जागीरें मिलती हैं और राजा लोग भी विशेष कर भटियानियों को परणते हैं जो अधिक सुन्दर और सुघड़ होती हैं महाराजा मानसिंह जी की १३ रानियों में ५ और जयपुर के महाराजा जगतसिंह जी की १३ रानियों में ७ भटियानियाँ थीं।

महाराजा मानसिंह की ५ भटियानी में से तीसरी ये प्रताप-

(१) इन १३ का यह ब्योहार है भटियानी ५ चावड़ी १ देवड़ी ४ कछवाही १ तँवर २

(१) ये १३ इस प्रकार था बीकावत १ राठोड़ १ चाँपावत १ भटियानी ७ तँवर १ रानावत १ सीसोदनी १

कुँवर जी थीं जिस से उन महाराजा साहिब के राज में रानी तीजा भटियानी जी, महाराजा तख्तसिंह जी के राज में माजी तीजा भटियानी जी और महाराजा श्री जसवंतसिंह जी के राज में दादी जी श्री तीजा भटियानी कहलाती थीं तीजा का अर्थ मारवाड़ी भाषा में तीसरे का है और यह शब्द पुल्लिंग है इस का स्त्रीलिंग तीजी अर्थात् तीसरी है और भाषा के नियमानुसार तीजा रानी ही कहा जाना चाहिये था परन्तु मारवाड़ और राजपूताने में यह भी मरजाद है कि बड़े घरों की स्त्रियों के वास्ते पुल्लिंग के बहुवचन शब्द की योजना करते हैं इसलिये तीजी की जगह तीजा और चौथी की जगह चौथा और पांचवीं की जगह पांचवाँ बोलते हैं और उसी कुल की दूसरी रानी को मारवाड़ के राजकुल में लाड़ी कहते हैं जैसे रानी लाड़ी भटियानी जी लाड़ीतुँवरजी लाड़ी चोहान जी, और जिस रानी से पहिले व्याह हुआ हो उस को महारानी की पदवी मिलती है जैसे महाराजा मानसिंह जी का पहिला विवाह जैसलमेर के गाँव के भाटी सूरजमल की बाई रायकुँवरि जी से हुआ था तो वे भटियानी जी ही महारानी कहलाती थीं।

प्रतापकुँवर जी से पहिले भी कई जोधपुर नरेशों के विवाह उन के घराने में हुए थे।

मारवाड़ के राठोड़ राज कुल की वंशावली से जाना जाता है कि महाराजा श्री अजीतसिंह जी का विवाह देरावर के रावल दल सिंह जी की पुत्री से हुआ था इस प्रसंग से दलसिंह के कुँवर पद्मसिंह जी ने संवत १७७१ के लगभग जोधपुर में आकर अपनी बाई का विवाह महाराजा अभयसिंह जी से किया जिन्होंने जाखण और कुचेरा नाम २ गाँव उनको दिए गए थे फिर वे जयपुर

---

(१) यह तो रानियों के दरजा का वर्णन हुआ और मारवाड़ के कर्मचारियों तथा दूसरे भले घरानों में पहिली स्त्री को बड़ी जी दूसरी को छोटी जी और तीसरी को गुजर जी कहते हैं उपस्त्रियों को राजों और राजवियों में पड़दायत और दूसरे घरों में खवास कहते हैं राठोड़ राज वंश में जिस पड़दायत पर विशेष प्यार होता उस को पासवान की पदवी मिलजाती है जैसे रानियों में महारानी का बड़ा दर्जा होता है वैसेही पड़दायतों में पासवान का दरजा है।

में चले गए और वहाँ १४ हज़ार की जागीर उन को महाराजा सवाई जयसिंह जी से मिल गई तो महाराजा अभयसिंह जी ने कुचेरा तो उतार लिया और जाखण रहने दिया।

पदमसिंह के बेटे विष्णुसिंह जी जाखण में रहे और उनकी २ लड़कियाँ महाराजा विजयसिंह के महाराज कुमार फ़तहसिंहजी और गुमानसिंह जी को ब्याही गईं और उनके भाई सवाईसिंह जी की बेटी का विवाह भँवर भीमसिंह जी से हुआ था जिन्होंने महाराजा विजयसिंह जी के पीछे राज पद प्राप्त करके संवत् १७५० में जाखण विष्णुसिंह जी से उतार लिया और अपने ससुरे सवाईसिंह जी को देदिया परन्तु भीमसिंह जी के पुत्रहीन धाम प्राप्त होने पर उनके चचेरे भाई मानसिंह जी गुमानसिंह जी के पुत्र थे संवत १८६० में जोधपुर की गद्दी पर बैठे तो जाखण सवाईसिंह जी से उतर कर विष्णुसिंह के दत्तक पुत्र गोयंददास को मिल गई इनके प्रतापकुँवर के सिवाय ३ बेटे गिरधरदास अजबसिंह और लछमनसिंह थे गिरधरदास के संतान न हुई तो लछमनसिंह के बेटे केसरिसिंह गोद और जो अब जाखण के जागीर दार हैं इनकी २ बहनें थीं सो महाराजा प्रतापसिंह जी को ब्याही गईं एक तो संवत १९६१ में शांत होगई और दूसरी रत्नकुँवर विद्यमान हैं जो अब ईडर की महारानी हैं।

प्रतापकुँवर की बचपने मे ही चारु चेष्टा देखकर पिता का विचार किसी बड़े घर में संबंध करने की थी और उसी अवसर में गाँव खेड़ाप के रामसनेही साधुओं को महंत पूर्णदासजी किसी कारण विशेष से जाखन में आगए तो ठाकुर ने उनसे भी वही अपना विचार प्रकट किया तो महंत जी ने कहा कि बाई के भाग बड़े हैं और संबंध भी आप का मन चाहा हो जावेगा पर बाई को विद्या और चतुराई भी सिखाना चाहिये ठाकुर ने भी इस बात को ठीक समझ कर इन के पढ़ाने लिखाने का प्रबंध किया और उस दिन से इनको भी महंत जी में गुरुभाव उत्पन्न हो गया जिसको अपने जीवन पर्यन्त अति श्रद्धा से निवाहती रहीं

फिर गोयंददास जी ने महाराजा मानसिंह जी से बाई के विवा-

ह करने का उद्यम करके जोधपुर में डोला भेजा असाढ़ सुदि ६ संवत् १८८६ को किले पर बाड़ी के महल में बड़े हर्ष और हित से बिवाह हो गया परन्तु इनसे कोई संतान नहीं हुई और न किसी दूसरी रानी से कोई कुँवर महाराज के अंत समय तक विद्यमान था परदायतों से तो ७ पुत्र थे पर उनको राज नहीं मिल सकता था इसलिये संवत् १९०० में महाराज के स्वर्ग गामी होने पर अहमद नगर से महाराजा श्री तखत सिंह जी सब की अनुमति से आकर राज सिंहासन पर विराजमान हुए मृतक महाराजा की १३ रानियों में से तो उनके जीते जी ही काल प्राप्त हो चुकी थीं और १ रानी देवडी जी सत करके साथ गई बाकी रही थीं जिनमें बड़ी भटियानी जी सब में मुख्य थीं परन्तु स्वार्थी लोगों ने उनमें और महाराजा तखतसिंह जी में बिगाड़ करा दिया सो आपस में अनबन रहने लगे और इन तीजा भटियानी जी से सगी मा का सा भाव और बरताव रहा जिससे इसके मन में जो कुछ शोक और संताप पति वियोग का वर्त्तमान था वह ऐसे आज्ञाकारी पुत्र के प्राप्त होने से शांत हो गया महाराज ने अपने चौथे कुँवर प्रतापसिंह जी को जनमते ही संवत् १९०२ में इनको गोद दे दिया था बरन उनका ऐसा नाम भी इन्हीं के नाम पर रक्खा था इन्हों ने उनको पुत्र के समान पाला था और बड़े होने पर अपने भाई लछमनसिंह की २ बाइयों से उनका विवाह करा दिया।

प्रताप कुँवर जी को राज से कई गाँव अच्छी उपज के मिले थे उनकी आमदनी में वे अपनी सरकार का भी काम चलाती थीं और धर्म पुण्य भी बहुत करती थीं जिससे उनकी कीर्त्ति बिशेष विख्यात हुई।

इनको रघुनाथ जी का इष्ट था जिससे इन्हों ने गुलाबसागर तलाव पर पक्का सिखरबन्ध मंदिर बनाकर रघुनाथ जी की मूर्त्ति पधराई फागुण बदि ६ संवत् १९०७ को कलस और ध्वजा चढ़ा कर प्रतिष्टा की फिर पुष्कर जी में पक्का घाट बँधवा कर अपने पति के इष्ट देव जलंधर नाथ जी का मंदिर बनवाया जिस की प्रतिष्ठा असाढ़ सुदी १३ संवत् १९०४ को हुई।

दूसरे वर्ष जोधपुर के गोल मोहल्ले में १ बड़ा रामद्वारा अपने

गुरुभाई दामोदरदास जी के लिये बनवा दिया जिनकी प्रतिष्ठा फागुन बदी ६ संवत १९०५ को हुई।

संवत १९०४ में अधिक वर्षा होने से गुलाबसागर के ऊपर का मंदिर फट गया तो घास मंडी में दूसरा विशाल मंदिर एक लाख रुपया लगाकर बनाया और रघुनाथ जी की प्रतिमा को उस में विराजमान करके पुराने मंदिर में महादेव जी पधरा दिए नये मंदिर की प्रतिष्ठा बड़ी धूम से की सब कुटम्ब और राज के सरदारों कर्मचारियों को गहने कपड़े दिए इस सुंदर मंदिर में एक विचित्रता यह भी है कि बहुत से राजाओं बादशाहों और देवताओं के चित्र भीतों में बनवाकर काच से जड़ा दिए हैं।

संवत १९११ में महाराजा तख्तसिंह जी कुटुम्ब सहित गंगा स्नान करने को हरिद्वार पधारे तो वहाँ इन्होंने खूब दान पुन्य किया।

संवत् १९२१ में महाराजा बरात सजकर रीवाँ में विवाह करने को पधारे तब भी जनाने सरदार सब साथ थे उस समय इन्होंने गंगा गया, काशी प्रयाग, मथुरा वृंदावन गोकुल आदि पुण्य तीर्थों की यात्रा की फिर १ महीने तक जयपुर में रहीं जयपुर के महाराजा रामसिंह जी के तीन विवाह जोधपुर में महाराज तख्त सिंह जी की एक भतीजी और २ बाइयों से हुए थे इस प्रसंग से वहाँ भी इन्होंने खूब दातव्यता की।

जयपुर से पुष्कर जी आकर अपने और अपने पति मान महाराज के बनाए हुए घाटों और नाथ जी के मंदिरों में स्नान और दर्शन किए ब्राह्मणों को नाना प्रकार के दान दिए वहाँ से अजमेर होकर महाराजा तख्तसिंह जी के साथ कुशलपूर्वक जोधपुर के किले में सुशोभित हुईं इस तीर्थ यात्रा में इनके ६००००) रु० खर्च हुए थे गंगा स्नान के समय महाराजा ने सब रानियों से गठ जोड़ कर इनके पाँव दूध से धोए और सब ने चरणामृत लिया।

इन्होंने और भी बहुत से काम सुकृति और परोपकार के किए थे जैसे सोने चाँदी के बरतन और दीपक द्वारिका, जगदीश, बद्री-नारायण, सेतबंध–रामेश्वर, और नाथद्वारे में भेजे १५०००) रु.

लगाकर चोपासनी(१) के गुशाँई जी की पधरावनी (२) ३ बेर ज़नानी ड्योढ़ी पर तथा अपने मंदिर में की और ११०००) रु० अपने पति मान महाराज के गुरु देवनाथ जी के पोतों लखमी नाथजी और मोतनाथ जी की पधरावनी में लगाए अपने गुरभाई दामोदरदास जी की चेली साधुरामबखस जी और भावनादास जी की किर्त पर कथा कराकर हज़ारों रुपये का धन दिया और महाराजा प्रतापसिंह जी को साथ भेजकर उन्हें बड़े मान सन्मान से अपने बनाए रामद्वारे में पहुँचाया खेड़ापे(३) के महंत का राज में पहिले कुछ सतकार नहीं होता था इन्होंने महाराजा तख्त-सिंह जी से कहकर महंत अरजुनदास जी को छड़ी चँवर और नक्कारा निशान दिलवाया।

ऐसेही अपने भाई भतीजों का पालन पोषण भी परम प्रीति से किया और भतीजियों के विवाह भी वैसेही हितचित और उचित प्रयत्न से किए जैसे बड़े भाई के एक बेटी का विवाह महाराजा तख्तसिंह जी से और दूसरी का महाराज माधोसिंह जी से और बिचले भाई की पोती को महाराज ज़ालिमसिंह जी से और छोटे भाई की २ बेटियों को महाराजा प्रतापसिंह जी से हज़ारो रुपये लगाकर किया।

रानी मंगे भाटों को जो रानियों के सिवाय और किसी राजा या कुँवर को नहीं माँगते हैं ६०००) रु. की लागत का हाथी सि-रोपाव रत्न जड़ित आभूषणों और शस्त्रों सहित दिया और महा-राजा से कहकर गाँव भी दिलाया।

वैतर्णी एकादशी के उद्यापन में २२०००) रु. लगाए ब्राह्मणों और रानी मंगों की कन्यायें परनाकर राजों के से दान दहेज

---

(१) यह गाँव जोधपुर से ३ कोस पश्चिम में है जब औरंगजेब मंदिरों को तोड़ने लगा था तो वर्त्तमान गुशाँई जी के पुर्वज वृज से आकर यहाँ रहे थे जब से चोपासनी मारवाड़ में गुरुद्वार के समान माना जाता है और श्री जी द्वार कहलाता है नाथ द्वारे के गुशाँईं भी यहाँ से गए हैं।

(२) बुलाकर पूजन और भेट करने को पधरावनी कहते हैं।

(३) यह गाँव जोधपुर से १५ कोस उत्तर में है यहाँ मारवाड़ के रामसनेही सा-धुओं का गुरुद्वारा है।

दिए ऐसेही चारणोंको भी धन देकर निहाल किया उन्होंने इनकी उदारता की प्रशंसा में बहुत से दोहे और कवित्त बनाए हैं उन में से १ दोहा यह है।

कुंजर दे उस कारणे, लाखाँ (१)लाखपसाव।
महारानी नृप मान री, देरावरि दरियाव॥

संवत १६२६ में महाराजा तख्तसिंह जी का देहांत होने से इन के वैसाही दुख हुआ कि जैसे पेट के बेटे की मृत्यु का होता है परन्तु महाराजा जसवंतसिंह जी के धैर्यदेने और आज्ञा में रहने से इनका अधीर शरीर कुछ सभला और इन्होंने भी ज्ञान चक्षु से संसार को अनित्य देखकर फिर भगवत चरनों में मन लगा लिया जिनकी शरण पति के विसर्जन होने के समय से ले रक्खी थी।

जब इनकी अवस्था ७० वर्ष के लगभग पहुँची तो रोगों का प्रकोप हुआ शरीर अस्वस्थ रहने लगा महाराज श्री जसवंतसिंह जी ने औषध उपाय कराने में न्यूनता नहीं रक्खी परन्तु काल की कराल गति से कुछ बस न चला अन्त समय में भी इन्होंने बहुत पुण्य धर्म किया तदनन्तर जो रुपया बचा वह दासियों और कामेतियों का ऋण चुकाने के लिये देदिया फिर तुरंत ही माह बदि १२ संवत १६४३ के २ घड़ी के तड़के प्राण मुक्त होगए उस समय महाराज प्रतापसिंह जी कहीं बाहर गए हुए थे इस लिये महाराजा श्री जसवंतसिंह जी की आज्ञा से दाह कर्म आदि की क्रिया महाराज श्री जालिमसिंह ने संपादन की १२ दिन वितीत होने पर ब्रह्मभोज तथा मोसर होजाने पर श्री दरबार से उनको सिरोपाव मिला जिसमें इतनी चीज़ें थीं

१ मोतियों की कंठी २ दुपट्टा ३ मंदील ४ कमखाब

प्रतापकुँवरि जी की कविता।

प्रतापकुँवर जी भाषा के लिखने पढ़ने में तो पहिले से ही निपुण थीं फिर जब महाराजा मानसिंह जी के स्वर्ग गवन करने

---

(१) चारणों का जो पारितोषक दिया जाता है उसका नाम उन्होंने लाखपसाव अर्थात् लाख रुपये का दान रख छोड़ा है चाहे थोड़ा हो या बहुत।

और २ भाई के काल प्राप्त होजाने से उनका चित्त विक्षिप्त होगया तो अपने गुरभाई के उपदेश से भगवत भजन में मन लगाया और उसी भाव की कविता करने का अभ्यास करके कई ग्रंथ बनाए जिन का एक बड़ा सँग्रह अब महारानी रत्नकुँवरि जी साहिब(१) के पास है और उन्हीं की कृपा से हमारे भी देखने में आया।

इस संग्रह में इतने ग्रन्थ हैं

१ ज्ञान सागर
२ ज्ञान प्रकाश
३ प्रताप पच्चीसी
४ प्रेमसागर
५ रामचन्द्र नाम महिमा
६ राम गुण सागर
७ रघुवर स्नेह लीला
८ रामप्रेम सुखसागर
९ रामसुजस पच्चीसी
१० पत्रिक सं० १९२३ चेत बदी ११ की
११ रघुनाथ जी के कवित्त
१२ भजन, पद, हरजस,

अब इनकी कोमल कविता का कुछ नमूना लिखा जाता है जो राम रस में भरी पड़ी हैं।

ग्रन्थ ज्ञानसागर से ।

चौपाई ।

अब सुनिए चित धार सुजाना । रघुवर किरपा कहूँ बखाना ॥
राम रूप हिरदे धर सुन्दर । वरणूँ ग्रन्थ हरन दुख दुन्दर ॥ १ ॥
जदुकुल अति उत्तम सुखदाई । जामें कृष्ण प्रगट भए आई ॥
तेहि कुल में गोयन्द मम ताता । प्रगटे जाण नगर विख्याता ॥२॥

(१) प्रतापकुँवरि जी का जो वृतांत हमने ऊपर लिखा है उसका अधिकांश इन्हीं महारानी जी के भेजे हुए लेखों से लिया गया है।

सूर बीर रत धरम सुग्यानी । राजनीति जानत सुखदानी ॥
रघुबर चरन प्रीत नित करहीं । मग अनीत पग कबहुँ न धरहीं ॥३॥
तिनके तीन पुत्र भल कहिए । गिरधर अजबसिंह पुन लहिए ॥
तीसर लछमनसिंह कहाई । मैं तिनके जनमी इक बाई ॥४॥
मात पिता नित मोहि लडावहिं । हमकूँ देख परम सुख पावहिं ॥
या पुत्री अति प्राण पियारी । इनके वर अब करो बिचारी ॥५॥
नगर जोधपुर मान महीपा । सब राठोर बंस में दीपा ॥
जेहि सँग चलत सेन चतुरंगा । धवल महल झुक रहे दुरंगा ॥६॥
नीत निधान प्रजा सुखदाई । धरम रीत मरजाद सवाई ॥
विद्या तप बल तेज निधाना । निस दिन धरत निरंजन ध्याना ॥७॥
तेहि नृप तें मम कियौ बिवाहा । गावत मंगल अनंत उछाहा ॥
दासी दास तुरँग रथ भारी । दीयो दायजो पिता अपारी ॥८॥
मान महीपत हम पति पाए । कारज सरे सरब मन भाए ॥
ईस स्वरूप जान पति साचा । सेवा कीनी मनसा वाचा ॥९॥
पति समान नहिं दूजा देवा । तातें पति की कीजै सेवा ॥
पति परमातम एक समाना । गावैं सबहीं वेद पुराना ॥१०॥
धरम अनेक कहे जग माँहीं । तिय कै पतिव्रत सम कोऊ नाँहीं ॥
देवहुती अनसूया नारी । पतिव्रत तैं हरिसुत अवतारी ॥११॥
ताते मैं पति सब *संभाई । पति मूरत हिरदै पधराई ॥
यूँ करतें केइ बरस विहाने । पति दरसन तैं जानत जाने ॥१२॥
संवत अठारौ अंत उदासा । बरस सईको भादव मासा ॥
सुद बारस दिन मान नरेसा । तज तन सुरपुर कियौ प्रवेसा ॥१३॥
पति बियोग दुख भयो अपारा । सूनो लगत सकल संसारा ॥
कछु न सुहाय नैन बहै नीरा । पति बिन कोन बँधावे धीरा ॥१४॥

---

* अंगीकार की ।

विकल भयौ तन बचन न आवै । हे हरि यो दुख कौन मिटावै ॥
असन बमन लागत दुखदाई । इक दिन एक बरस सम जाई ॥ १५ ॥
यूँ दुख करत गए दिन केते । जाने झूट जगत सुख जेते ॥
तखत सिंह सुत पाट बिराजे । घर घर मंगल बाजे बाजे ॥ १६ ॥
देख देख सुत आज्ञाकारी । कछु इक दुख की बात बिसारी ॥
सुन सुन कथा पुरान अपारा । सब झूठो जान्यो संसारा ॥ १७ ॥
एक समै सपनों निस आयौ । रघुवर दरसन मोहि दिखायौ ॥
मेघ बरन तन स्याम बिराजै । धनुष बाण प्रभु कर मैं छाजै ॥१८॥
कट भाथाँण कस्यौ सुखदाई । बनमाला गल मै पधराई ॥
सीस मुकट कुण्डल छबि सोभै । पीतांबर ओढ़न मन लोभै ॥ १९ ॥
बायें अङ्ग जानकी माता । दरसन करत हरष भयौ गाता ॥
दोनूँ हाथ सीस मम दीने । बोले बचन कृपा रस भीने ॥ २० ॥
सुन परताप कुँवर कहुँ तोही । तूँ वल्लभ लागत अति मोही ॥
झूठो जगत मोह नहि करिए । मोकूँ भज भवसागर तरिए ॥ २१ ॥
मात पिता सुत संग न साथी । झूठो घर धन घोड़ा हाथी ॥
आयौ एक एक ही जासी । पाप पुंन अपनो जिय पासी ॥ २२ ॥
तातै जगत मोह तज दीजै । हमरै हित इक मन्दिर दीजै ॥
मो मूरत तामें पधराओ । कर उच्छव मन भाव बधाओ ॥ २३ ॥
सुनत बचन मम नींद उडाई । हरष भयो सो कह्यो न जाई ॥
रघुवर किरपा कीनो भारी । अब मन्दिर की कीजे त्यारी ॥ २४ ॥

दोहा ।

संवत उगणी सैतियै । चौथ चैत बद जोय ॥
सर गुलाब की तीर पर । नींव दिराई सोय ॥२५॥

चौपाई ।

अति ऊँचौ मन्दिर सुखकारी । जल पर झुके झरोखा भारी ॥

परम मनोहर चोक बिसाला । सोभ रही च्यारूँ दिस साला ॥ २६ ॥
तामें रघुवर कियो निवासा । सहित जानकी लछमन पासा ॥
कथा कीरतन सदा समाजा । दरसन करत होत सिध काजा ॥ २७ ॥
एक समै प्रभु मन इम आई । महादेव कूँ लिए बुलाई ॥
सुनौ सदाशिव बचन हमारा । तुम हो मेरे प्राण पियारा ॥ २८ ॥
यह मन्दिर कैलास समाना । तुमरे लायक कृपा निधाना ॥
प्रताप कुँअर पर किरपा कीजै । इन मन्दिर में आप रहीजै ॥ २९ ॥
मैं मंदिर अब और कराऊँ । तामें सीता सहित रहाऊँ ॥
महादेव कहे सुन भगवाना । किन मिस तुम तजहौ यह थाना ॥ ३० ॥
कहे रघुवर सुनिए सिब बाता । अचरज एक कहूँ सुख दाता ॥
देख चरित हमरो इक भारी । मंदिर और कराऊं त्यारी ॥ ३१ ॥
इन विध सिव अरु रघुबर दोई । करी सला नहीं जानत कोई ॥
एक समै हरि ऐसी विचारी । सो सब सुनो बात नर नारी ॥ ३२ ॥
नौ को बरस जबै चल आयौ । रघबर कियौ आप मन भायौ ॥
मेघ मालकूँ अज्ञा दीनी । विरखा झड़ी सात दिन कीनी ॥ ३३ ॥
नदी तलाब उमग सब आए । नहिं गुलाब सागर जल माए ॥
लगी फेट जल की जब आई । मंदिर की गज गीर डिगाई ॥ ३४ ॥
हम जब समाचार यह पायो । अति उदास मन में दुख आयो ॥
रघुवर कहा करी प्रभु ऐसी । लोक सुनत तुम कूँ कहा कहसी ॥३५॥
फिर सपने रघुबीर पधारे । सुनिए बाई बचन हमारे ॥
इन मन्दिर में शिव पधरावो । हमरे मन्दिर और बनावो ॥ ३६ ॥
सुन रघुवीर बचन सुखदाई । हरष भयो मन में अधिकाई ॥
सिव रघुवीर करे जो काजा । सोई हमरे सुख को साजा ॥ ३७ ॥
शिव कर कृपा बिराजैं यामें । हमरै अधिक लाभ है तामें ॥
सुभ दिन देख सुमंगल गाए । सिवजी मंदिर मैं पधराए ॥ ३८ ॥

दोहा ।

अब मंदिर रघुवीर को, तुरत करीजे त्यार ॥
दरसन कर परसन हुए, सबही नर अरु नार ॥ ३९ ॥
तब हम सबही नगर में, मेले जन समुदाय ॥
मंदिर हित भू देखिए, सदा काल सुखदाय ॥ ४० ॥

चौपाई ।

देखत नगर चहूँ दिस सबही । खास मढ़ी में आए जबही ॥
सुंदर भूमि देख सुख पाए । मंदिर लायक सब मन भाए ॥ ४१ ॥
जाकी भूमि दाम तेहि दीना । मंदिर हित आरंभ जु कीना ॥
सुभ दिन जाण सुमंगलकारी । रघुवर मंदिर करी तयारी ॥ ४२ ॥
खोदत नींव नीर जब आए । *मुस्तगीम पाषाण भराए ॥
दासा थंभ दिए ता ऊपर । मंदिर शिखरबंध किए भूपर ॥ ४३ ॥
†सोवन कलश शिखर पर सोभत । पूरण चंद्र जान मन लोभत ॥
ऊँचो दंड लग्यौ आकासा । तापर सोवन धजा प्रकासा ॥ ४४ ॥
मंडप की अदभुत छबि छाई । परम विसाल न बरनी जाई ॥
रंग रावटी जिम व कूँटा । बँगला च्यार च्यारही खूँटा ॥ ४५ ॥
कंचन काच घड़त नग नाना । मंदिर द्वार मनोहर जाना ॥
चहुँ दिस सोभत चित्र अनेका । सुंदर सदा एक तैं एका ॥ ४६ ॥
बीच विराजत चौक बिसाला । च्यारूं दिसा चारु चौसाला ॥
ऊँची पौल किवार सुहाए । ता बाहिर तोरण छबि छाए ॥ ४७ ॥
दोनूँ दिसा दोय गज कीना । परखत गज जिम परत न चीना ॥
सनमुख पौल चलत बजारा । तापर झुके झरोखा सारा ॥ ४८ ॥

---

* (मुस्तकीम) यह अर्बी भाषा का शब्द है अर्थात् दृढ़ ।
† सोना

दोहा ।

सरब देव अवतार सब, सब राजन के चित्र ।
जहाँ तहाँ भीतन पर, लिखे सोभत सदा विचित्र ॥ ४९ ॥
सनमुख साल सुहावणी, रघुवर रमण निवास ।
हौद भरयो निरमल सुजल, सुधा समान सुबास ॥ ५० ॥
कथा साल तिन मैं सदा, कथा भागवत होय ।
प्रेम सहित नित प्रति सुनैं, नर नारी सब कोय ॥ ५१ ॥

चौपाई ।

तुलसी रघुबर प्राण पियारी । ताकौ *बिड़ो सरब सुखकारि ॥
चौक बीच सोभत सरसाई । सीतापति नित चरण चढ़ाई ॥ ५२ ॥
रतन जड़ित हिंडोरो छाजै । मोतिन की झालरी बिराजै ॥
सुबरण खंभा सोभत भारी । तापर तोरण की छबि न्यारी ॥ ५३ ॥
तामैं सीता सहित सदाई । सावन मैं †हीडंत रघुराई ॥
लोक नगर को दरसन करहीं । कर दरसन भवसागर तरहीं ॥ ५४ ॥
एकादसी दिवस जब होई । साधु विप्र आवत सब कोई ॥
नर नारी बहु होत समाजा । कथा कीरतन बाजत बाजा ॥ ५५ ॥
पाट उच्छव दिन आवत जबहीं । उच्छव अधिक होत है तबही ॥
नौबत घुरत बजत सुरनाई । जय जय सबद होत सुखदाई ॥ ५६ ॥
उच्छव रामनवमि दिन तैसे । जनमअष्टमी जानहु जैसे ॥
सरद आदि अनकूट अपारा । उच्छव होवत बरस मँझारा ॥ ५७ ॥
भाँत भाँत भोजन पकवाना । खीर खाँड घ्रित विंजन नाना ॥
सीरो लाडू पुरी पकोरी । घेवर केसर पाक कचोरी ॥ ५८ ॥
पेड़ा दही तड़ी अरु पूपा । नुकती सेव जलेबी सूपा ॥

---

* थाला † झूलत

औरहि भोजन विविध प्रकारा । भोग लगत रघुवर के सारा ॥ ५९ ॥
कर भोजन जल अचवन करहीं । नागरवेल पान मुख धरहीं ॥
महाप्रसाद देव सब चावैं । सो परताप कँवर नित पावैं ॥ ६० ॥
समै समै हुय सुंदर झाँकी । हरषत मन देखत छबि बाँकी ॥
सोभत नित वैकुंठ समाना । यह मंदिर रघुवर अस्थाना ॥ ६१ ॥
रघुबर कृपा करी अति भारी । इन विध मंदिर कीनो त्यारी ॥
अवध पुरी वैकुंठ विहाई । *जोधाने मैं व्राजे आई ॥ ६२ ॥
रघुबर एक भाय के मीता । और कछू नहिं राखन रीता ॥
भाव भक्ति रघुबीर पिछानै । जुग जुग बेद पुराण बखानै ॥ ६३ ॥

दोहा ।

मान महीपति मोहि पति, ज्ञानी गुनी उदार ।
इष्ट जलंधर नाथ को । जानत सब संसार ॥ ६४ ॥
तातैं पति के प्रेम सों, मंदिर नाथ अनूप ।
कीनौं पुसकर ढ़िग रे, हम हिरदै धर चूँप ॥ ६५ ॥
मेरे मन तन वचन तैं, लछमन सीताराम ।
इष्ट आसरो बाँहि बल, सकल सुधारन काम ॥ ६६ ॥

पत्रिका ।

सिध श्री नगर वैकुंठ जान । उपमा सबही विराजमान ॥
जहाँ अष्ट सिद्धि नव निधि निवास । †कौवैर करत भंडार जास ॥१॥
विधि वेद उचारत वार वार । हाजरी करत निस दिन हजार ॥
शिव करत निरत तांडव अभंग । रघुवीर रिझावत लेत रंग ॥ २ ॥
जहाँ पथ बुहारत पवन चाल । जल भरत इंद्र ले मेघ माळ ॥
‡दीवा ससि सूरज सुभग दोय । जमराज जहाँ कुटवाळ जोय ॥ ३ ॥

---

* जोधपुर
† कुबेर ‡ दीपक ।

नित अंगन रसोडे तपत जास । दरवान खडे जय विजय दास ॥
झांकि कनक महल अदभुत अनंत । उपमा न कहत मुख तैं बनंत॥४॥
मणि जटित खंभ सुंदर कपाट । देहली रची विद्रुम सुघाट ॥
भीतन परमाणिक लगे लाल । चित्राम मनो कति बोलि जाल ॥ ५ ॥
बहु वरन वरन बंधे वितान । तोरण पताक धुज चमर जान ॥
सिंहासन अरु सज्या अनूप । ऊपरनि विमल पय फैन रूप ॥ ६ ॥
चहुँ दिसा विराजत विविध बाग । ता माँहि कलपतरू रहे लाग ॥
चंपा जू चँवेली रायबेल । केवरो केतकी दाख केल ॥ ७ ॥
अंजीर जाँबु आँबा अनार । झुक रहे भूमि फल फूल भार ॥
चातक विहंग कोकिला मोर । शुक राजहंस पिक करत सोर ॥ ८ ॥
नित भरे सरोवर विमल नीर । सोपान कनक मणि रचित तीर ॥
बहु कमल कमोदनि रहे फूल । मदमत्त भरम ता माहि भूल ॥ ९ ॥
चलें सीतल मंद सुगंध पौन । भल भ्राज रह्यौ वैकुंठ भौन ॥
आवत विमान के झुंड झुंड । जिम सावन सोभत घन घुमंड ॥ १० ॥
नारद सनकादिक भक्तराज । नित बसत तहाँ प्रभु दरस काज ॥
ऊँचौ सिंहासन अति अनूप । ताबीच विराजत ब्रह्म रूप ॥ ११ ॥
घट घट प्रति व्यापक एक जोत । पट तंनु जथा मिलओत पोत ॥१२॥
इक आदि पुरुप अणघड़ अलेख । नहिँ लहत पार सारदा सेष ॥
कहेँ नेति नेति नित च्यार वेद । सुर नर नहिँ जानत जास भेद ॥१३॥
संसार सरब परगट करंत । सबही को पालत पुन हरंत ॥
आधार सरब रहै निराधार । नहिँ आद अंत मधवार पार ॥ १४ ॥
पर तीन अवस्था गुणातीत । धर सगुण रूप निज भक्त प्रीत ॥
गो, विप्र, साधु पालक कृपाल । देवाधिदेव दाता दयाल ॥ १५ ॥
राजाधिराज महाराज राज । रघुवंस मुकट मणि धरम पाज ॥
ओपमा ईस लायक अनंत । श्री श्री श्री श्री श्री रमाकंत ॥ १६ ॥

श्री रामचंद्र करुणा निकेत । जानकी भात लछमन समेत ॥
चरणारविंद प्रति लिखत आप । काया पुर सें कँवरीप्रताप ॥ १७ ॥
डंडोत विनय मम बार बार । बाँचसि कृपानिधि सहित प्यार ॥
.... । तुम कृपा ईहाँ नित कुसल खेम ॥१८॥
तुम सदा कुसल मूरत कहाय । दुख सोक न जाके निकट आय ॥
रम रहे सदा आनंद रूप । भगतन प्रतिपालक राम भूप ॥ १९ ॥
निम कृपा दृष्टि राखियो राम । हमरे नहिं तुम बिन और स्याम ॥
मो औगुण कबहुँ न चित्त धार । निज विरद जान कीजो सँभार ॥२०।
हमरे तुम जीवन प्रान एक । मन वचन काय नहिं तजूँ टेक ॥
मो मति मलीन कछु समझ नाहिं । अब अधिक लिखूँ कहा पत्र माहिं २॥
अपरंच अरज इक सुनो मोहि । तुम सर्व जान कहा लिखूँ तोहि ॥
काया पुर मैं तो हुकम पाय । मैं बास कियो प्रभु इहाँ आय ॥२२॥
तुम अज्ञा हमको करी एह । मो चरन सरन कीजो सनेह ॥
नित कथा हमारी सुनो कॉन । हिरदे में हमरौ धरौ ध्यॉन ॥ २३ ॥
हाथन तैं सुकृत सदा होय । नैनन तैं दरसन करौ सोय ॥
पग तैं नित तीरथ चलौ पंथ । रसना तैं गावौं ज्ञान ग्रंथ ॥ २४ ॥
अज्ञा फरमाई ऐसी आप । मैं सिर पर धारन लगी छाप ॥
इतने सुन कै यह समाचार । भोमिया दौड़ आए अपार ॥ २५ ॥
मद काम क्रोध अरु लोभ मोह । ईर्षारु बाद अज्ञान द्रोह ॥
भय मच्छर ममता अरु गुमान । आसा बड तृसना सोक जान ॥ २६ ॥
मन जोध महा बलवंत जोय । ता सम नहिं जोधा और कोय ॥
सुर नर सबही को लिए जीत । एकलौ करै ऐसी अनीत ॥ २७ ॥
मन मोह राव को कामदार । सब सेना चाले ताहि लार ॥
सावंत सूर सब एक एक । जोद्धार ऐसे आए अनेक ॥ २८ ॥

दोहा ।

दस दरवाजा घेरिकैं, रूपे महारण धीर ।
हाकौ कर भेले हुए, वनि तनि आए वीर ॥ २९ ॥
जरा नाम या जगत मैं, निपट निलज इक नार ।
सोपिणे आंई इस समय, प्रगट लिंये परिवार ॥ ३० ॥
आलस पुन आयौ अठे, बुरी नींद कौ [2]बींद ।
जंग करण जोरावरी, तिंको करत ताकीद ॥ ३१ ॥
औ[4] रासो[5] रचियौ अठे, बात वनी इन बार ॥
अरज लिखी तातें इसी, होज्यौ हरि हुसियार ॥ ३२ ॥
हमतो तुमरे आसरे, बैठे सदा नचीत ॥
स्याल देख ज्यूं सिंघ सुत, उर में रहत अभीत ॥ ३३ ॥
हमतो तुमरो आसरो, जग में लीनो जोय ॥
जो उ[6]बेल करसौ नहीं, हाँसी जग मैं होय ॥ ३४ ॥
हरजी अरजी बाँचज्यौ, रघुबर दीन दयाल ॥
मरजी सूँ कीजो मया, प्रीतम थे प्रतिपाल ॥ ३५ ॥
हमरै हित हरि मेलँज्यौ, फ़तै करन को फ़ौज ॥
मो कारज सरसी महा, छत्रभुज तुमरै चौज ॥ ३६ ॥
वसीवाँन या जगत मैं, हर काहूँ को होय ॥
ताहू की लज्या रहै, काज न बिगड़ै कोय ॥ ३७ ॥
हमरे तो तुम से धनी, सिर पर सीताराम ॥
तीन लोक के प्राणपति, कैसे विगड़े काम ॥ ३८ ॥

छप्पै ।

अधिक अरज़ कहा लिखूँ । आप प्रभु अंतर जामी ॥

---

१ भी २ दूलह ३ यह ४ यह ५ झगड़ा ६ सहायता ७ भेजना ८ आधीन ।

महादेव को मंत्र कहो । को सिखवै स्वामी ॥
जुग जुग धर अवतार । पारजन करै अपारा ॥
कीरत मैं कहा कहं । संत जस गावत सारा ॥
और नाहिं आसा रखूँ । राम भरोसो राज रो ॥
परतापकवँररो कीजिए । *अवरा काज प्रभु आज रो ॥ ३९ ॥

दोहा ।

समाचार तुम वाचज्यो, सबही प्रीत समेत ॥
पाछी लिख ज्यों पत्रिका, हरजी हमरे हेत ॥ ४० ॥
अक्षर घट बध मातरा, मैं कछु समझूँ नाहिं ॥
सब सुधार कीजो सही, माधव तुम मन माँहि ॥ ४१ ॥

छप्पै ।

तुलछराय हर करण अरु । हरी राम हरिदास ॥
इनकी वंदन बाँचसी । रघुवर रमा निवास ॥ १ ॥
बंधु हमारे प्राणप्रिय । लछमणासिंघ सुनाम ॥
ताहू की मालम हुसी । प्रीत सहित परिणाम ॥
संमत उगनी सौ वरस । तेईसौ निरधार ॥
चैत क्रष्ण एकादसी । लिख्यो पत्र रविवार ॥ ४१ ॥

इति श्री पत्रिका समाप्तं ।

---

* अवश्य ।

फुटकर।

कवित्त सवैया।

आस तो काहू की नाहिँ मिटी, जग मेँ भए रावण से बड़ जोधा।
सावंत सूर सयोधन से बल से, नल से रत बाद बिरोधा॥
केते भए नहीँ जाय बखानत जूझ मुए सबही कर क्रोधा।
आस मिटे परताप कहै हरि नाम जपरु बिचारत बोधा॥ १॥
धर ध्यान रटो रघुबीर सदा धनु, धारि को ध्यान हिये धर रे।
पर पीर मेँ जाय के बेग परो, कर तेँ सुभ सुकृत को कर रे॥
तर रे भवसागर को भजि के, लजि के अघ औगुण ते डर रे।
परताप कँवार कहै पद पंकज, पाव घरी मत वीसर रे॥ २॥

होरी।

होरी खेलन की रुत भारी।
नर तन पाय भजन कर हरि को। औसोसर दिन चारी॥
अरे अब चेत अनारी। टे०।
ज्ञान गुलाल अबीर प्रेम करि। प्रीत तणी पिचकारी॥
सास उमास राम रँग भर भर। सुरत सरीसी नारी॥
खेल इन संग रचारी॥ १॥
सुलटो खेल सकल जग खेले। उलटो खेले खिलारी॥
सतगुर सीख धार सिर ऊपर। सत संगत चल जारी॥
भरम सब दूर गुमारी॥ २॥
ध्रू प्रहलाद बभीखन खेले। मीराँ करमा नारी॥
कहे प्रताप कुँवर इम खेले। सो नहीँ आवे हारी॥
सीख सुन लीजे हमारी॥ ३॥

होरी ।

होरिया रंग खेलन आवो ।
इला पिंगला सुखमणि नारी । ता संग खेल खिलावो ॥
सुरत पिचकारी चलावो ॥ १ ॥
काचो रंग जगत को छाँडो । साँचो रंग लगावो ॥
बाहर भूल कबू मन जावो । काया नगर वसाओ ॥
तबै निरभै पद पावो ॥ २ ॥
पाँचो उलट वेर घट भीतर । अनहद नाद बजावो ॥
सब बकवाद दूर तज दीजे । ज्ञान गीत नित गावो ॥
पिया के मन तबही भावो ॥ ३ ॥
तीनों ताप तीन गुन त्यागो । साँमो सोक नसावो ।
कहे परताप कुँवर हित चित में । फेर जनम नहीँ पावो ॥
जोत में जोत मिलावो ॥ ४ ॥

हिंडोला ।

देखो री सहियाँ सावणियारो, रंग राम सिया झूले संग ॥ टे० ॥
अधिक उछाह समंद मिलवासूं, नदीयों चली छे उमंग ॥
जड पाखान नीर को छाँडत, झरणा झरत अभंग ॥
बेलड़ियाँ फूली तरु सगले, नव पल्लव बहुरंग ॥
चमकत बीज मधुर घन गर्जत, अंबर भया छो सुरंग ॥
निरख प्रताप जुगल जोड़ी छबि, लाजत कोट अनंग ॥ १ ॥

हिंडोला ।

अवध पुर उमड़ घटा रही छाय ॥ टे० ॥

चालत मंद पवन पुरवाई, नभ घन घोर मचाय ॥
दादुर मोर पपैया बोलत, दामनि दमकि दुराय ॥
हरी हरी भूमि सघन बन तरवर, लता रही लपटाय ॥
सरजू उमगत लेत हिलोरें, निरखत सिय रघुराय ॥
कहत प्रताप कँवर हरि ऊपर, बार बार बल जाय ॥ २ ॥

(१७) मीराबाई।

मेड़तिया राठौड़ रतनसिंह जी की बेटी मेड़ते के राव दूदा जी की पोती और जोधपुर के बसानेवाले राव जोधा जी की पड़पोती थीं। इनका जन्म गाँव चोकड़ी में हुआ था जो इनके पिता की जागीर में था। ये संवत् १५७३ में मेवाड़ के मशहूर महाराणा साँगा जी के कुँवर भोजराज को ब्याही गई थीं परन्तु शीघ्र ही विधवा होकर भगवत भजन करने लगीं इनके देवर महाराना रतनसिंह, विक्रमाजीत और उदैसिंह तीनों एक के पीछे एक इनके सामने अपने पिता की गद्दी पर बैठे, इन में से रतनसिंह और विक्रमाजीत, इनकी ड्योढ़ी पर साध संतों का आना जाना देखकर चिढ़ते थे और इनको इस बात से रोकते थे परन्तु ये भगवत भक्ति से उनका कहना नहीं मानती थीं तब राना विक्रमाजीत ने अपने दीवान की सलाह से इनके पास चर्णामृत के नाम से विष भेजा ये माथे पर चढ़ाकर उसको पी गईं परन्तु वह विष इनको नहीं चढ़ा और राना जी का मुँह उतर गया फिर ये तीर्थ यात्रा के वास्ते चीतोड़ से चली आईं और बहुत दिनों तक मेड़ते में रह कर मथुरा वृंदावन गईं वहाँ से द्वारिका जी पहुँचीं और वहीं संवत् *१६०३ में इनका देहांत होगया जिसके बाबत् भक्त लोग ऐसा कहते हैं कि श्री रणछोड़ जी में लय हो गईं।

इनके भजन और पद हर जगह मंदिरों सद्गृहस्थियों के घरों और साध संतों के समाजों में गाए जाते हैं उनमें असली थोड़े और नकली बहुत हैं जो साध संतों ने मन माने

* कोई लोग इनका इस बर्ष से पीछे तक भी विद्यमान रहना मानते हैं।

घड़ लिए हैं-जिनमें राणा जी को मीराबाई का पति बताकर बुरा भला कहा है वे अज्ञानता से मीरा जी को राना जी की पतनी ही मानते हैं और यह बात सर्वथा झूठ है।

एक बेर जोधपुर के महाराजा श्री मानसिंह जी की सभा में ऐसेही नक़ली पद गाए जाते थे उनको सुनकर १ सभासद ने कहा कि यह मीरा स्वर्ग में गई होगी या नर्क में। महाराज ने पूछा क्यों? तो कहा कि उसने पद २ में पति की निंदा गाई है जैसे—

अब नहीं रहूँ राणा मैं हटकी मन लागो गिरधरसूँ ॥ १ ॥
राँणा जी मेवाड़ो म्हाँ को काँई करसी ॥ २ ॥
हथ लेवो राँणा संग जुड़ियो गिरधर घर पटरानी ॥३॥

महाराजा ने कवीन्द्र जोसी शंभुदत्त जी की तर्फ़ देखा तो उन्हों ने अर्ज़ की कि अन्नदाता जी इस भाव के ये सारे पद मोड़ों (साधों) के घड़े हुए हैं मीराबाई तो बड़ी सती और पतिव्रता थीं वे कब यों ऊल जलूल बकने लगी थीं उन्हों ने गीतगोविंद की टीका बनाई है वह पुस्तक प्रकाश में से मँगाकर अवलोकन करा लीजिए उससे आप को उनका आशय और आचरण विदित हो जावेगा—

महाराज ने वह ग्रंथ मँगा कर देखा तो उसमें लेश मात्र भी इन भजनों का भाव नहीं पाया और सब लोगों को जोसी जी के कहने का विश्वास होगया कि साधों ने उनके नाम से बहुत से झूठे झूठे पद बना लिए हैं और विचार करने से इन पदों की कविता भी गूँगी बावली सी है मीराबाई तो बड़ी पंडिता थीं और उनकी कविता भी बहुत सुंदर सरस और सुशीलता युक्त थी जो इन कपोल कल्पित पदों की भरमार से छिप गई हैं मुझ को इस पुस्तक में लिखने के वास्ते उनकी बड़ी आवश्यकता थी और इस भँवरजाल में से उसका पहिचानना भी कठिन था।

सो बड़े हर्ष की बात है कि मीराबाई के २ असली पद काँचने

कविराव राजा जी श्री *सोहनसिंह जी साहिबों ने अपने हाथ से लिखकर इनायत फ़रमाए हैं मैं उन्हीं को अपना अहोभाग्य समझकर यहाँ लिखता हूँ इन के बाबत् राव राजा जी साहिबों ने यह भी लिखा है कि "पहिलो पद श्री मीराबाई द्वारिका में मंदिर दरसण ने पधारी यातरे गायो ने दूसरो पद लय हुआ उण समय रो है।"

रागसोरठ ताल जलदतिताला व धीमातिताला ।

हरि करिहो †जन की ‡भीर ।
द्रोपदी की लाज राखी तुम बढ़ायो चीर ॥
भक्त कारण रूप नरहरि धर्‍यो आप शरीर ॥
हरिनकस्यप मार लीनो धर्‍यो नाहिन धीर ॥
बूड़ते गजराज तार्‍यो कियो बाहिर नीर ॥
दास मीराँ लालगिरधर दुःख जहाँ न पीर ॥

दूजो

साजन सुध ज्योँ जाने त्योँ लीजे हो ॥ अ० ॥
तुम बिन मेरे और न कोई कृपा रावरी कीजे हो ॥
घाम न भूख रैन नहिं यैं तन पल पल छीजे हो ॥
मीराँ कहे प्रभु गिरधर नागर मिलि बिछुरन नहिँ कीजे हो ॥

मीराबाई के ग्रन्थ ।

मीराँबाई ने कई ग्रंथ भक्ति मार्ग के बनाए जिनमेँ से

---

* ये राव राजा जी महाराजा श्री मानसिंह जी के पुत्र थे और खेद का विषय है कि इनका देहांत माह सुदी ६ सं० १९५७ का होगया । जोधपुर के राज वंश में ये बड़े पंडित कवि और उदारचित्त महाशय थे ।

† भक्त ‡ सहायता ।

नरसी जी का मायरा हमारे भी देखने में आया है उसके आदि में यह ठुमरी जंगला राग की है ।

राग जंगला ठुमरी ।

गनपति कृपा करो गुणसागर । जन को जस सुभ गाय सुनाऊँ ॥
पश्चिम दिसा प्रसिद्ध धाम सुख । श्री रणछोड़ निवासी ॥
नरसी को माहेरा मंगल गावै मीराँ दासी ॥ १ ॥
क्षत्री वंस जनम मम जानो । नगर मेड़ते वासी ॥
नरसी को जस वरन सुणाऊँ । नाना विधि इतिहासी ॥ २ ॥
सखा आपने संग जु लीने । हर मंदिर पै आए ॥
भक्ति कथा आरंभी सुंदर । हरि गुण सीस नवाए ॥ ३ ॥
को मंडल को देस बखानूं । संतन के जस वारी ॥
को नरसी सो भयो कौन विध । कहो महिराज कुँवारी ॥ ४ ॥
है प्रसन्न मीराँ तब भाख्यो । सुन सखि मिथुला नामा ॥
नरसी की विध गाय सुनाऊँ । सारे सब ही कामा ॥ ५ ॥

मध्य का १ पद राग जैजैवंती ।

सोवतही पलका में मैं तो । पल लागी पल में पिउ आए ॥
मैं जु उठी प्रभु आदर दैन कूँ । जाग परी पिव ढूँढ़ न पाए ॥१॥
और सखी पिव सोय गमाए । मैं जु सखी पिव जागि गमाए ॥२॥
आज की बात कहा कहूँ सजनी । सुपना में हरि लेत बुलाए ॥३॥
वस्त एक जब प्रेम की पकरी । आज भए सखी मन के भाए ॥४॥

अन्तिम पद ।

यो माहरो सुनैरु गुँनै है । बाजे अधिक बजाय ॥
मीराँ कहै सत्य करि मानो । भक्ति मुक्ति फल पाय ॥ ६ ॥

दूसरा ग्रंथ गीतगोविंद की टीका है जिस का वर्णन ऊपर आ-चुका है तीसरे ग्रंथ रागगोविन्द का पता उदयपुर से मित्रवर पंडित गौरीशंकर जी ने दिया है और उनकी कविता के विषय में लिखा है कि मीराँबाई की कविता भक्ति से भरी हुई है उसमें ईश्वर प्रेम और वैराग्य झलकता है उस कविता की वाणी कोमल, मधुर और रसिक है।

मीराबाई के भजन।

मीराँबाई के यथार्थ भजनों के मिलने की कठिनता तो हम ऊपर लिख ही चुके थे तो भी हमारे कई मित्रों ने इनको खोजकर इस ग्रंथ में यथा साध्य लिखने का भार हमारेही सिर पर दिया और बाहर से भी इस विषय में कई सज्जन सुजनों का लिखा आया तो विवश होकर हमने भजनों के प्राचीन संग्रह दरबार जोधपुर के पुस्तकप्रकाश से मँगाए और अन्य विद्वानों के पुस्तकालय भी देखे तो उनमें लिखे हुए मीराँबाई के पदों में से जो यथार्थ पद उनके बनाए हुए हमको जान पड़े वे हम यहाँ उन महाशयों के हित साधन और पाठकों के मनोरंजन के लिये लिखते हैं।

धमाल।

श्याम म्हासूँ ऐंडो डोले हो। औरन सूँ खेले धमाल॥
म्हाँसूँ मुखहि न बोले हो॥ श्या०॥ १॥
म्हारी गलियाँ नाँ फिरे। वाँके आँगण डोले हो॥श्या०॥ २॥
म्हाँरी अँगुली नाँ छुवे। वाँकी बाँहयाँ मोर हो॥ श्या०॥ ३
म्हाँरो अँचरा ना छुवे। वाँको घूँघट खोले हो॥ श्या०॥ ४॥
मीराँ के प्रभु साँवरो। रँगरसियो डोले हो॥ श्या०॥ ५॥

काफी।

आज अनारी लेगयो सारी। बैठी कदम की डारी हे माय॥

म्हारे गेल पड्यो गिरिधारी । हे माय आज० ॥
मै॑ जल जमुनो भरन गई थी । आगयो कृस्नमुरारी हे माय ॥
ले गयो सारी अनारी म्हारी । जल मै॑ ऊभी उघारी हे माय ॥
सखी साइनि मोरी हँसत है । हँसि हँसि दे मोहि तारी हे माय ॥
सास बुरी अर नणद हठीली । लरि लरि दे मोहि गारी हे माय ॥
मीराँ के प्रभु गिरिधर नागर । चरन कमल की वारी हे माय ॥

कन्हरी ।

भई हों॑ बावरी सुनके बाँसुरी । हरि बिनु कछु न सुहाये माई ॥
श्रवन सुनत मेरी सुध बुध बिसरी । लगी रहत तामें॑ मन की गाँसुरी ॥ १
नेम धरम कोन कीनी मुरलिया । कोन तिहारे पासुरी ॥
मीराँ के प्रभु बस करलीने । सप्त सुरन तानानि की फाँसुरी ॥२॥

देवगंधार ।

बसो मेरे नैनन मे॑ नंदलाल । मोहिनी मूरति साँवरी सूरति बने नैन विशाल१
मोर मुकट मकराकृत कुंडल । अरुण तिलक दिए भाल ॥
अधरसुधा रसमुरली राजति । उर बैजती माल ॥ २ ॥
क्षुद्र घंटिका कटितटि सोभित । नूपुर शब्द रसाल ॥
मीराँ के प्रभु संतन सुखदाई । भक्त वच्छल गोपाल ॥ ३ ॥

राग कनड़ी ।

हो कौनाँ किन गूँथी जुलफाँ कारियाँ । ॥ टेक ॥
सुघरकला प्रवीन हाथन सूँ । जसुमतिजू ने सँवारियाँ ॥ १ ॥
जो तुम आवो मेरी बाखरियाँ । जरि राखूँ चंदन किवारियाँ ॥ २ ॥
मीराँ के प्रभू गिरिधर नागर । इन जुलफन पर वारियाँ ॥ ३ ॥

राग परज।

गोकुल के बासी भलेही आए। गोकुल के बासी॥ टेक॥
गोकुल की नारि देखत। आनंद सुखरासी॥
एक गावत एक नाँचत। एक करत हाँसी॥ १॥
पीताँबर फेँटा बाँधे। अरगजा सुबासी॥
गिरिधर से सु नवल ठाकुर मीराँ सी दासी॥ २॥

राग परज।

गोहनेँ गुपाल फिरूँ, ऐसी आवत मन मेँ।
अवलोकत बारिजबदन, बिवस भई तन मेँ॥ १॥
मुरली कर लकुट लेऊँ, पीत बसन धारूँ।
आछी गोप भेष मुकट, गोधन संग चारूँ॥ २॥
हम भई गुल काम लता, वृंदावन रैना।
पसु पंछी मरकट मुनी, श्रवन सुनत बैनाँ॥ ३॥
गुरुजन कठिन कानि, कासोँ री कहिए।
मीराँ प्रभु गिरिधर मिलि, ऐसेँ हा रहिए॥ ४॥

राग सोरठ।

भजि मन चरण कमल अबिनासी॥ टेक॥
जेताइ दीसे धरनि गगन बिच। तेताइ सब उठ जासी॥ १॥
कहा भयो तीरथ ब्रत कीने। कहा लिए करवत कासी॥
इस देही का गरब न करना। माटी मैँ मिलि जासी॥ २॥
यो संसार चहर की बाजी। साँझ पड्याँ उठ जासी॥ ३॥
कहा भयो है भगवाँ पहर्याँ। घर तज भए सन्यासी॥

जोगी होय जुगति नहीं जाणी । उलट जनम फिर आसी ॥४॥
अरज करौं अबला कर जोरें । स्याम तुम्हारी दासी ॥
मीराँ के प्रभु गिरिधर नागर । काटो जम की फाँसी ॥ ५ ॥

राग मारू ।

कोई स्याम मनोहर ल्योरी । सिर धरैं मटकिया डोले ॥
दधि को नाँव बिसर गई ग्वालन । हरि ल्यो हरि ल्यो बोले ॥१॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर । चेली भई बिन मोले ॥
कृष्ण रूप छकी है ग्वालनि । औरहि औरै बोलै ॥ २ ॥

राग धनासिरी ।

मीराँ लागो रंग हरी । सब रंग अटक परी ॥ टेक ॥
गिरिधर गास्याँ सती न होस्याँ । मन बसीयाँ घन नामी ॥
जेठ बहू को नातो नाँही । तुम सेवक हम स्वामी ॥ १ ॥
छापा तिलक मनोहर बानी । सील संतोष सिंगारो ॥
और कछू ना भावे हो राणा । ओ गुर ज्ञान हमारो ॥ २ ॥
गिरिधर धणी कुटुंबी गिरिधर । मात पिता सुत भाई ॥
थे थाँरे म्हे म्हाँरे हो राणा । गावे मीराँबाई ॥ ३ ॥

राग कनड़ी ।

बंदे बंदगी मति भूल, चार दिना की कर ले खूबी ज्यूँ दाडिमदा फूल १
आयाथा ए लोभ के कारण । मूल गमाया भूल ॥ २ ॥
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर । रहना वे हजूर ॥ ३ ॥

राग सोरठ ।

थाँने काईं काईं कैहे समझाऊं । म्हारा बाल्हा गिरधारी ॥

पूर्व जनम की प्रीति हमारी। अब नहीं जात निवारी ॥
सुंदर बदन जोवते सजनी। प्रीति भई छे भारी ॥
म्हारे घरे पधारो गिरिधर। मंगल गावै नारी ॥
मोती चौक पूराऊं बाल्हा*। तन मन तो पर वारी ॥
म्हारो सगपण तोसूँ साँवलिया। जुग सुनहीं बिचारी ॥
मीराँ कहे गोपिन को वाल्हो। हमसूँ भयो ब्रह्मचारी ॥
चरन सरन है दासी तुम्हारी। पलक न कीजै न्यारी ॥ १ ॥

राग सोरठ।

मनरे परसि हरि के चरन ॥
सुभग सीतल कँवल कोमल। त्रिबिधि ज्वाला हरन ॥१॥ मनरे०
जे चरन प्रहलाद परसे। इंद्र पदवी धरन ॥
जिन चरन ध्रुव अटल कीनो। राखि अपने सरन ॥ २ ॥
जिन चरन ब्रह्मांड भेटयो। नख सिख सिरी जरन ॥
जिन चरन प्रभु परसि लीने। तरी गोतम घरन ॥ ३ ॥
जिन चरन काली नाग नाथ्यो। गोप लीला करन ॥
जिन चरन गोवरधन धर्‍यो। इंद्र को गरभ हरन ॥ ४ ॥
दासि मीराँ लालगिरधर। अगम तारन तरन ॥ मनरे परस० ॥

राग सोरठ।

कोई दिन याद करोगे। रमता राम अतीत ॥ टेक० ॥
बिपत परे कोई काम न आवै स्वारथ के सब मीत ॥ १ ॥
आसन मार गुफा महिं बैठे। यही भजन की रीति ॥ २ ॥
मीराँ के प्रभु गिरधर नागर। जोगी किसके मीत ॥ ३ ॥

* प्यारा।

राग सोरठ ।

रँगभरी रँगभरी रँगसूँ भरी री । होरी आई प्यारी रँग सूँ भरी री ॥
उड़त गुलाल लाल भए बादल । पिचकारनि की लागी झरी री ॥ १ ॥
चोवा चंदन और अरगजा । केसर गागर भरी धरी री ॥ २ ॥
मीराँ कहे प्रभु गिरिधर नागर । चेरी होय पायन में परी री ॥ ३ ॥

राग मारू ।

नैना लोभीरे बोहुरस के नहीं आय ॥ टेक० ॥
रोम रोम नख सिख सब निरखत । ललच रहे ललचाय ॥ १ ॥
मैं ठाढ़ी ग्रह आपनेरे । मोहन निकसे आय ॥
सारँग ओट तजे कुल आँकुस । बदन दिय मुसकाय ॥ २ ॥
लोक कुटंब बरज बरजही । बतियाँ कहत बनाय ॥
चंचल चपल अटक नहीँ मानत । परहथ गए बिकाय ॥ ३ ॥
भली कहो कोई बुरी कहो मैं । सब लई सीस चढ़ाय ॥
मीराँ कहे प्रभु गिरिधर के बिन । पल भर रह्यो नहीं जाय ॥ ४ ॥

राग कल्याण ।

मेरो तो मन रामही राम रैटेरे ॥ टेक ॥
राम नाम जप लीजे प्रानी । कोटिक पाप कटेरे ॥ १ ॥
जनम जनम के खत जु पुराने । नामहिं लेत फटेरे ॥ २ ॥
कनक कटोरे इमृत भरियो । पीवत को न टेरे ॥ ३ ॥
मीरा कहे प्रभु हरि अविनासी । तन मन ताहि पटेरे ॥ ४ ॥

पद ।

म्हाँरे घर आज्यो प्रीतम प्यारा ॥ टेक ॥

तन मन धन सब भेट करूँगी । भजन करूँगी तुम्हारा ॥ १ ॥
वो गुणवंत साहिब कहिए । मो मैं औगुण सारा ॥ २ ॥
मैं निगुणी गुण जानू नाहीं । थे छो बगसण हारा ॥ ३ ॥
मीराँ कहे प्रभु कब मिलौगे । तुम बिन नैन दुखारा ॥ ४ ॥

पद ।

आलीरे मेरे नैनन बान पड़ी ॥ टेक ॥
चित्त चढी मेरे माधुरी मूरत । उर बिच आन अड़ी ॥ १ ॥
कब की ठाढी पंथ निहारूँ । अपने भवन खड़ी ॥ २ ॥
कैसे प्रान पिया बिन राखूँ । जीवन मूल जड़ी ॥ ३ ॥
मीराँ गिरधर हाथ बिकानी । लोग कहै बिगड़ी ॥ ४ ॥

राग सुख सोरठ ।

प्रभू जी थे कहाँ गयो नेहड़ी लगाय ॥ टेक ॥
छाड गया बिसवास सँगाती । प्रेम की बात बणाइ ॥ १ ॥
बिरह समँद मैं छाँड गया छो । प्रेम की नाव चलाइ ॥ २ ॥
मीराँ कहे प्रभु कब मिलौगे । तुम बिन रह्यो न जाइ ॥ ३ ॥

पद ।

हेली मो सूँ हरि बिन रह्यो न जाइ ॥ टेक ॥
सासू लड़े रीस जनावे ननदी । पीव जी रह्यो रिसाइ ॥ १ ॥
चोकी मेलौ भलेही सजनी । ताला द्यो न जड़ाइ ॥ २ ॥
पूर्व जन्म की प्रीत हमारी । सो कहाँ रहे लुकाइ ॥ ३ ॥
मीराँ कहे प्रभू गिरधर के बिन । दूजो न आवे दाइ ॥ ४ ॥

पद ।

पतियाँ मैं कैसे लिखूँ लिखीही न जाइ ॥ टेक ॥
कलम भरत मेरे कर कंपित । हिरदो रह्यो घरराई ॥ १ ॥
बात कहूँ मोहि बात न आवै । नैन रहे झरराई ॥ २ ॥
किस बिध चरण कँवल मैं गहिहूँ । सबहि अंग थरराई ॥ ३ ॥
मीराँ कहे प्रभू गिरधर नागर । सबही दुख विसराई ॥ ४ ॥

पद ।

देखो सहियाँ हरि मन काटो कियो ॥ टेक ॥
आवन कह गया अजूँ न आयो । करि करि बचन गयो ॥ १ ॥
खान पान सुध बुध सब बिसरी । कैसे करीने जियो ॥ २ ॥
बचन तुम्हारे तुमही विसारे । मन मेरो हर लियो ॥ ३ ॥
मीराँ कहे प्रभु गिरधर नागर । तुम बिन फटत हियो ॥ ४ ॥

(१८) वाघेली श्री रणछोड़ कुँवरि जी ।

रीवाँ के महाराजा श्री विश्वनाथसिंह जी के भाई बलभद्र-सिंह जी की बेटी और जोधपुर के महाराजा श्री तख़तसिंह जी की रानी हैं इनका बिवाह बलभद्रसिंह जी के मरे पीछे महाराजा रघुराजसिंह जी ने संवत् १९२१ में किया था ये बड़ी भगवत भक्त हैं अपने पिता की पूज्य मूर्त्ति राधा वल्लभ जी की जिसको वे लड़ाइयों में ले जाया करते थे रीवाँ से पूजने के वास्ते साथ लाई थीं सो उसं तो १ बड़ा शिखरबंद मंदिर जोधपुर में बना कर वैशाख सुदि १३ संवत् १९४७ को पधरा दी है और अब कई बरसों से गोबिंद जी की पूजा अति श्रद्धा से करती हैं। गोबिंद जी ने १ रात इनको सपने में दर्शन देकर कहा था कि हम जैपुर

---

१ पसंद। २ सखियाँ।

में १ सुनार के यहाँ हैं तुम इसको मँगालो इन्हों ने लड़के ही ४ आदमी जैपुर भेजे और १ पत्र भी वहाँ की रानियों, जानकी कँवर और कृष्ण कँवर को लिख दिया जो इनके चचेरे भाई महाराजा रघुराजसिंह जी की पुत्री थीं और जैपुर के महाराजा रामसिंह जी को ब्याही थीं उन्हों ने तलास कराई तो १ सुनार के पास गोविंद जी की मूर्त्ति मिली वह कार्त्तिक सुदी २ सँवत् १९२९ को इनके पास पहुँची इन्हों ने उस दिन को जन्म दिन मान कर बड़ा उत्सव किया और हरसाल करती हैं और उस मूर्ति का गोविंद-सिंह नाम रख कर नित्य दिन पुत्र भाव से पूजती हैं धर्म के कामों में इनकी बड़ी श्रद्धा है अपनी आमदनी को जो रीवाँ और जोधपुर के ख़ज़ानों से आती है दान पुण्य और सुकृत में ख़र्च कर देती हैं अभी १ लाख बत्तियां अपने हाथ से बनाकर बद्री नारायण को भेजी हैं और एक महीने की रोशनी का ख़र्च और चाँदी सोने के दीपक भी भेजे हैं ऐसे ही एक एक लाख बत्ती जगदीश, रंगजी, और रामेश्वर जी में भी भेजने वाली हैं।

निस्सन्देह दादी बाघेली जी साहिब को भगवत से बड़ा प्रेम है और उसी के रस में छकी हुई कभी २ भगवत के गुणानुवाद के कवित्त और हरिजस भी बनाती हैं और उनको प्रसन्न मन प्रफुल्लित चित्त और प्रेम पगी बानी से भगवत के आगे गाती हैं।

उनकी भक्ति रसमयी कविता का नमूना यह है।

हरिजस।

गोविंद लाल तुम हमारे, मोहे दुःख से उबारे।
मैं सरन हूँ तिहारे, तुम काल कष्ट टारे॥ १॥
हो बाघेली के प्यारे, सिर क्रीट मुकुट वारे।
छोनी छटा को पसारे, मोरी सुरत ना बिसारे॥ २॥
कोटिन पतित उधारे, कृपा दृष्टि से निहारे।
हों भरोसे हों निहारे, मेरी बात को सुधारे॥ ३॥

कवित्त ।

आभा तो निर्मल होय सूरज किरण ऊगेतें
चित्त तो प्रसन्न होय गोविंद गुण गाए सें ।
पीतर तो उज्जल होय रेती के माँजे से
हृदय में जोति होय गुरु ज्ञान पाए से ।
भजन में बिछेप* होय दुनिया की सँगति से
आनँद अपार होय गोविंद के ध्याए से ।
मन को जगावो अरु गोविंद के सरन आओ
तिरने के ये उपाव गोविंद मन भाए से ॥ १ ॥
गोविंद के पास आओ मन न विचार लाओ
भो भो के पाप जाय दरसन के पाए से ।
हिरदे में ध्यान लाओ श्रवण को अमी पाओ
मन के त्रिताप जाय गोविंद गुन गाए से ।
गुरू को राख भाव गोविंद से हँसि हसाव
दिल में प्रेम बढ़े गोविंद छब छाए से ।
चरन में सीस नाओ भगती की राह पाओ
कलि में पार होय गोविंद नाम पाए से ॥ २ ॥

(१६) रत्नकुँवरि बीबी ।

ये कविया कुलांगना जगतसेठ मुरशिदाबाद के घराने में हुई हैं। इनकी कविता अति रुचिर और रसमयी है इन्होंने प्रेमरत्न नाम एक ग्रन्थ संवत १८४४ में बनाया था जिसका भगवत्भक्तों में बहुत प्रचार है क्योंकि उसमें श्रीकृष्ण ब्रजचंद आनंदकंद की लीलाओं का उल्लेख परम प्रेम और प्रचुर प्रीति से किया गया है।

---

* विक्षेप

भारतगवर्नमेण्ट की विद्याविभाग के सुविख्यात ग्रन्थकार राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद जो अभी कई वर्ष पहिले तक विद्यमान थे इन्हीं रत्नकुँवरि जी के पोते थे इन्होंने प्रेमरत्न ग्रंथ के विज्ञापन में अपनी दादी के गुणों का बखान इस प्रकार किया है ।

वे संस्कृत में बड़ी पंडिता थीं छहों शास्त्र की वेत्ता फ़ारसी भाषा भी इतनी जानती थीं कि मौलाना रूम की मसनवी और दीवान शम्सतबरेज़ जब कभी हमारे पिता पढ़कर सुनाते तो वह उसका संपूर्ण आशय समझलेतीं। गाने बजाने में अत्यंत निपुण थीं और चिकित्सा यूनानी और हिन्दुस्तानी दोनों प्रकार की जानती थीं। योगाभ्यास में परिपक्व और यमनियम और वृत्ति ऋषि मुनियों की सी, सत्तरवर्ष की अवस्था में भी बाल काले और आँखों की ज्योति बालकों की सी, यह हमारी दादी थीं इस से हमको अब उनकी अधिक प्रशंसा लिखने में लाज आती है परन्तु जो साधुसंत और पंडित लोग उस समय के उनके जानने वाले काशी में वर्तमान हैं वे उनके गुणों को अद्यावधि स्मरण करते हैं।

प्रेमरत्न छपगया है यह सोरठा उसके मंगलाचरन और समाप्ति के हैं

सोरठा ।

अबिगत आनँद कंद । परम पुरुष परमातमा ॥
सुमिरि सुपरमानंद । गावत कछु हरि यश विमल ॥ १ ॥
पुनि गुरुपद सिरनाय । उर धरि तिनके बचन वर ॥
कृपा तिनहिं की पाय । प्रेमरत्न भाषत रतन ॥ २ ॥
अगम उदधि मथि जाहि । पंगु तरहि बिनु जिमि तरणि ॥
तैसिय रुचि मन याहि । अमित कान्ह यशगान की ॥ ३ ॥
पै मो मन विश्वास । पुरवत पूरण काम प्रभु ॥

उर पुर सकल निवास । निज जन को अभिलाष लखि ॥ ४ ॥
लीला अगम अपार । पार न पावैं शेष शिव ॥
जासु श्वास श्रुति चार । तेहि गुण गण को गन सकहि ॥ ५ ॥
अमित चरित्र अपार । यथा शक्ति गावत सकल ॥
निज मुख करन पवित्र । भाषत हरि गुण विमल ॥ ६ ॥
भक्त हृदय सुख दैन । प्रेम पूरि पावन परम ॥
लहत श्रवण सुनि बैन । भववारिध तारण तरण ॥ ७ ॥
इहाँ कहौ विस्तार । मिलन सकल कुरुक्षेत्र को ॥
कथा जु प्रथम उदार । करि बरणौं संक्षेप हित ॥ ८ ॥
बारह से चालीस । अंत चतुर वर्ष वितित भय ॥
विक्रम नृप अवनीस । भए भयो यह ग्रंथ तब ॥ ९ ॥
माह माह के माँह । अति शुभ दिन सित पंचमी ॥
गायो परम उछाह । मंगल मंगल वार वर ॥ १० ॥
कह्यो ग्रंथ अनुमान । त्रय ज्ञात अरसठ चौपई ॥
तिहि अर्धरु अठजान । दोहा सोरह सोरठा ॥ ११ ॥
काशी नाम सुठाम । धाम सदा शिव को सुखद ॥
तीरथ परम ललाम । सुभग मुक्ति बरदान छम ॥ १२ ॥
ता पावन पुर माहिँ । भयो जन्म या ग्रन्थ को ।
महिमा बरणि न जाहि । सगुण रूप यश रस भन्यो ॥ १३ ॥
कृष्ण नाम सुख मूल । कलिमल दुख भंजन भजत ॥
पावहि भवनिधि कूल । जाके मन यह रस रमहि ॥ १४ ॥
कुरुक्षेत्र शुभथान । ब्रजबासी हरि को मिलन ॥
लीला रस की खान । प्रेम रत्न गायो रतन ॥ १५ ॥

(२०) महारानी जी श्री रतनकुँवरि बाई जी ।

ये जाखन के ठाकुर लछमनसिंह जी की बाई हैं इनका

विवाह ५ वर्ष की अवस्था में ही इनकी फूफी तीजा माजी श्री प्रतापकुँवर जी ने महाराजा प्रतापसिंह जी से कर दिया था जो इस समय ईडर के महाराजाधिराज हैं।

ये महारानी जी बड़ी उदार और भगवत भक्त हैं और अपनी बुआ जी के ग्रन्थों को बड़े प्रेम से पढ़ा करती हैं और उन्हीं के ढंग पर आप भी पद और हरिजस बनाती रहती हैं मेरे अर्ज़ कराने पर कृपा करके आप ने कुछ पद भिजवाए थे सो नीचे लिखे जाते हैं।

सियाबर तेरी सूरत पै हूँ वारी रे॥
कीट मुकट की लटक मनोहर,
म्हानु लागत है अति प्यारी॥
बा छबि निरखत को मो नैना,
जोवत बाट तिहारी॥
रतन कुँवरि कहै मो ढिंग आके,
झलक बता जा धनुधारी॥

राग बरवा।

मेरो मन मोह्यो रँगीले राम॥
उन की छबि निरखत ही मेरो,
बिसर गयो सब काम॥
अष्ट पहर मेरे हिरदे बिच,
आन कियो निज धाम॥
रतनकुँवर कहे उनको पलपल,
ध्यान धरूँ नित साम॥

पद।

रघुवर म्हारा रे मैनू दरस दिखा जा रे॥

तो देखन की चाह घनी है टुक इक झलक बता जा रे ॥
लग रही तेरी केते दिन की मीठी बैन सुनाजा रे ॥
रतनकुवर तोसों करत वीनती एकबेर मो ढिग आजा रे ॥ २ ॥

पद ।

रघुबर प्यारो रे दसरथ राज दुलारो रे ॥
क्रीट मुकट पर छत्र विराजत । कानन कुंडल वारो रे ॥
बाँकी लटक दिखाके रसीलो । मोह लियो मन म्हारो रे ॥
रतनकुँवर कहे राम रँगीलो । रूप गुणन आगारो रे ॥ २ ॥

राग हजाज ।

थारी छूं जी म्हाँरा प्यारा राम ।
कीजो म्हासूँ दिलड़ारी बात ॥
मिल विछड़ण नहीं कीजे साँवरा ।
राखो चरणारी साथ ॥
ध्यान धरूँ हृदय बिच तुम को ।
याद करूँ दिन रात ॥
रतन कुवर पर महर करो अब
निज कर पकरो हाथ ॥

(२१) रसिकविहारी ।

महाराजा नागरीदास(१)जी की दासी बनीठनीजी भी कविता करती थीं और पदों में अपना नाम रसिकविहारी धरती थीं

---

(१) यह कृष्णगढ़ के महाराजा सावंतसिंह जी का उपनाम था इनका वृत्तान्त हम राज रत्नाकर ग्रंथ में लिख चुके हैं।

इनको महाराज ने पासवान की पदवी दी थी ये हमेशा महाराज की सेवा में रहती थीं इनका देहांत महाराज से कुछ पीछे आसाढ़ सुदि १५ संवत् १८२२ को हुआ था इनके बनाए पद नागर-समुच्चय के अंत में छपे हैं कुछ यहाँ भी लिखे जाते हैं।

पद ।

कैसे जल जाऊँ मैं पनघट जाऊँ ।
होरी खेलत नंदलाडलो री क्यों कर निभन पाऊँ।
वे तो निलज फाग मदमाते हौं कुलवधू कहाऊँ ।
जो छुवे अंचर रसिकविहारी तो हौं धरती फार समाऊँ ॥ ११ ॥

पद ।

कुंज पधारो रंग भरी रैन
रंग भरी दुलहिन रंग भरे पिया स्यामसुंदर सुखदैन ॥
रंग भरी सेज रची जहाँ सुंदर रंग भर्यो उलहत मैन ॥
रसिकबिहारी प्यारी मिल दोऊ करो रंग सुख चैन ॥ २ ॥

पद ।

हो झालो दे छे रसिया नागर पनाँ ॥
साराँ देखा लाज मराँ छाँ आवाँ किण जतनाँ ॥
छैल अनोखो कयो न मानै लोभी रूप सनाँ ॥
रसिकविहारी नणदु बुरी छै हो लाग्यो म्हाँरो मनाँ ॥ ३ ॥

पद तिताल ।

आज बरसाने मंगल माई
कुँवर लली को जनम भयो है । घर घर बजत बधाई

मोतिन चौक पुरावो गावो । देहु असीस सुहाई
रसिकविहारि की यह जीवनि । प्रगट भई सुखदाई ॥ १ ॥

राग नायकी ताल चंपक ।

आज बधावो वृषभान के धाम ॥
मंगल कलश लिए आवत गावत ब्रज की बाम ॥
कीरति कें कीरती प्रगटी है रूप धरें अभिराम ॥
रसिकविहारी की यह जोरी हैंनी राधा नाम ॥ २ ॥

राग सारंग तिताल ।

मैं अपनौं मनभावन कीनौं । इन लोगानि को कहा कीनौं ॥
मन दै मोल लयो री सजनी । रत्न अमोलक नंददुलारो ॥
नवल लाल रंग भीनो ॥
कहा भयो सब कें मुख मोरे । मैं पायो पीव प्रवीनौं ॥
रसिकविहारी प्यारो प्रीतम । सिर बिधनौं लिख दीनौं ॥ ३ ॥

इकताल तिताल ।

रतनाळी हो थारी आँखड़ियाँ
प्रेम छकी रस बस अलसाँणी । जाँणि कँवल की पाँखड़ियाँ
सुंदर रूप लुभाई गति मति हैं । मई ज्यूँ मधु माँखड़ियाँ ॥ ४ ॥

(२२) रानी राड़धड़ी जी ।

ये मारवाड़ अन्तरगत राड़धड़ा प्रांत के राना की पुत्री थीं और सिरोही के राव जी को ब्याही गई थीं दोनों राजा रानी

लिखे पढ़े थे और कभी २ कविता करके भी अपना जी बहलाया करते थे आबू का सजल और सुरम्य पहाड़ सिरोही के राज्य में है एक समय वसंत रितु में राव जी ने वहाँ की अनूपम छटा देख कर यह दोहा कहा।

[1]टूँके टूँके केतकी, झिरने झिरने जाँय[2]।
[3]अर्बुद की छवि देखताँ, ओर न आवे दाँय[4] ॥ १ ॥

तब रानी जी ने जो पैदल चलने से थक गई थीं और जिनके देश में सिरोही से अधिक गेहूँ निपजते थे पति से सहमत न होकर चोज से यह दोहा कहा।

जव खानो भखनो अहेर, पाँलो चलनो पंथ।
अर्बुद ऊपर बैठनो, भलो सराँयो कंथ ॥ १ ॥

राव जी ने यह सुनकर दिल में कुछ बुरा माना और कहा क्या आबू तुम्हारे निर्जल और निर्गुण देश से भी गया बीता है रानी ने कहा हमारे देश की क्या बात है वह तो देवताओं को भी दुर्लभ है और उसकी प्रशंसा में यह दोहा कहा।

घर ढाँगी आलम धनी, परेगल लैणा पास।
लिखियो जिणने लाभसी, रौंड़धड़ा रो बास ॥ १ ॥

---

१ गिरि शिखर २ जूही ३ आबू ४ पसंद ५ अफीम ६ पैदल ७ सराहा ८ ढांगी राड़धड़े में रेत के १ धोरे (थल) का नाम है कहते हैं कि किसी बादशाह ने अपने अरबी घोड़ों के वास्ते अरब देश का रेत जहाज़ों में मँगाई थी जिसको १ लक्खी बनजारा बैलों पर लाद कर दिल्ली को लिए आता था जब राड़धड़ के राजस्थान नगर के पास पहुँचा तो उस बादशाह के मरने की खबर सुनी और निराश होकर वह सब रेत वहाँ डाल गया जिसके ढेर से यह धोरा बना है इस प्रांत के लोग घोड़ों के बछेरों को लाकर इस रेत में लोटाते हैं नगर के घोड़े में अरब के घोड़ों के से कई गुण होने इसी रेत के प्रभाव से माने जाते हैं ९ राड़धड़े में परमेश्वर को आलम जी के नाम से पूजते हैं १० प्राड़वाव ११ नदी का नाम है १२ जिसको १३ मिलेगा १४ ६-

(२३) रामप्रिया जी ।

श्री मती महारानी रघुराज कुँवरि उपनाम रामप्रिया जी अवध प्रांत के प्रतापगढ़ नरेश श्रीमान् राजा प्रतापबहादुरसिंह जी की रानी हैं इन्हों ने भक्ति पक्ष के पद अनेक रागों में बनाकर रामप्रिया विलास नाम ग्रन्थ रचा है जिससे इनकी काव्य शक्ति और विद्वत्ता प्रकाश भली भाँति से होता है ।

ये कई कवित्त इन महारानी महाशया जी के भारतभानु में छपे थे सो यहाँ लिखे जाते हैं ।

सवैया ।

मुख चन्द अभाव में चन्द लखूँ अरबिंदन ते मुख नैन लहीँ री ।
द्विति देखि दिवाकर ध्यान धरूँ छबि सीय बनो दृढ चित्त गहीँ री ॥
मुसकाय के बंक बिलोकनि वै हिय रामप्रिया में समाय रहीँ री ।
बिधना दिन रैन बिचार्यो कहूँ सुनु वे बतियां सपनेऊँ नहीँ री ॥ १ ॥

गज एकहिं बार पुकारि कह्यो तब जाय पिया देहिं ग्राह गहीरी ।
द्रुपदी के अकास निहारत हीं दुरयोधन की ममता न रहीरी ॥
प्रह्लाद अजामिल गिद्ध लों क्या जहँ दीन पुकार्यो गयो वितहीँ री ।
अब रामप्रिया के पुकारिबे में प्रभु वे बतियाँ सपनेऊँ नहीँ री ॥ २ ॥

कहि राम प्रिया गुण गावें जे राम के छन्द रचैं जो हुलासन सों ।
सु अलंकृत शब्द बिचार्यों करै नित बैठो रहैं दृढ आसन सों ॥
फल चारिहूँ पावें बिना श्रम के भय नाहि कहा यम पाशन सों ।
फिरि अन्तहु स्वर्ग पयान करैं कवि बैठो बिमान हुताशन सों ॥ ३ ॥

धड़ा जोधपुर से ५० कोस पश्चिम में लूनी नदी से सजल एक रेतिला प्रांत पन्द्रह बीस कोस तक फैला हुआ है यहाँ के राजस्थान का नाम नगर है वहीं की ये रानी राड़धड़ी जी थीं परन्तु इनके पिता और पति का नाम अभी तक निर्णय नहीं हुआ है निश्चय होने पर दूसरी आवृत्ति में छापेंगे—

(२४) रायप्रवीन वा प्रवीनराय।

यह एक चतुर सुघड़ सुन्दर सुजान पातर उर्छा के महाराजकुमार (१) इन्द्रजीत की कृपापात्र थीं हाव भाव कटाक्ष और कविता में कुशल थीं कवि केशवदास ने भी कविप्रिया में इस की प्रशंसा लिखी है।

इन्द्रजीत ने संगीत का १ अखाड़ा बनाया था जिसमें परम प्रसिद्ध और रूपगुण संपन्न ये ६ पातरें थीं।

१ रायप्रबीन	३ नवरंगराय	५ विचित्रनयना
२ रंगराय	४ तीन तरंग	६ लचितलोचना

और तो सब गाने बजाने नाचने में ही परायण थीं पर रायप्रवीन कविता करने में भी प्रवीन थीं जैसा कि कवि केशव ने कहा है।

नाचत गावत हैं सबै। सबै बजावत बीन॥
तिन में करत कवित्त इक। रायप्रवीन प्रवीन॥१॥

रायप्रवीन की प्रशंसा के दोहे।

तंत्री तुंबरु सारिका। सप्त सुरन सों लीन॥
देव सभा सी देखिए। रायप्रवीन प्रवीन॥
सत्या रायप्रवीन जुत। सुर तरु सुर तरु गेह॥
इन्द्रजीत तासों बंध्यो। केशव सदा सनेह॥
रायप्रवीन प्रवीन सों। परवीनन को सुख॥
अपरवीन केसव कहा। परवीनन मन दुख॥
रतनाकर लालित सदा। परमानंदहि लीन॥
अमल कमल कमनीय कर। रमकि रायप्रवीन॥

---

(१) राजकुमार इन्द्रजीत राजा मधुकर साह के चौथे बेटे और राजा रुद्रप्रताप बुन्देले के पोते थे जिन्हों ने संवत १५८८ में उर्छा को बसाया था। इन्द्रजीत

रायप्रवीन कि सारदा । सुचि रुचि राजत अंग ॥
बीना पुस्तक धारिनी । राजहंस सुत संग ॥
वृषभवाहिनी अंग उर । बासुकि लसत नवीन ॥
सिब संग सोहत सर्वदा । सिवा कि रायप्रवीन ॥

आगे ऐसी लोकोक्ति है कि अकबर बादशाह ने रायप्रबीन की शोभा सुनकर इंद्रजीत को लिखा कि इसे हमारे पास भेज दो। राजकुमार को चिंता हुई और प्रवीनराय भी घबराई उसने सभा में यह सवैया पढ़कर सलाह पूछी ।

आईहौं बूझन मंत्र तुम्हैं । जिन स्वासनसों सिगरी मति गोई ॥
देह तजौं कि तजौं कुलकानि । अजौं न लजौं लजिहै सब कोई ॥
हाथ रहै परमारथ स्वारथ । चित्त विचारि कहौ पुनि सोई ॥
जामें रहैं प्रभु की प्रभुता । अरु मेरो पतिव्रत भंग न होई ॥

परंतु किसी ने संतोषदायक बात नहीं कही तब उसी ने अपनी बुद्धि और बाचाल शक्ति पर भरोसा करके राजकुमार से कहा कि आप मेरे वास्ते ऐसे सबलबादी से न बिगाड़िए मैं अपनी आप निबेड़ लूँगी तो भी राजकुमार ने केशवदास को उसके साथ भेजा और कहा कि देखना इस को छोड़कर मत आना और बादशाह को भी अप्रसन्न मत करना जब दोनों आगरे में पहुँचे और कवि जी मंत्रियों से उपाय करने की चेष्टा करने लगे तो प्रवीनराय ने कहा कि आप परिश्रम न कीजिए मुझे ही भेज दीजिए मैं मुजरे के साथ ही बिदा होने का प्रबंध भी करलूँगी । केशवदास ने कहा तूँ जान

को इनके बड़े भाई रामसाह ने कछोहा और बढ़ोर ग्राम दिए थे पर ये विशेष करके उर्छा में ही रहते थे । राजा रामसाह संवत १६४१ में गद्दी पर बैठे थे और कविप्रिया केशवदास ने संवत १६५८ में बनाई थी जिससे २ वर्ष पहिले संवत १६५६ में राजा बरसिंहदेव अपने बड़े भाई रामसाह को निकाल कर उर्छा में अपना अधिकार स्थिर कर चुके थे और रामसाह चंदेरी में आ रहे थे ।

और उस बादशाही छड़ीदार के साथ दरबार में भेजदी जब इसने वहाँ जाकर मुजरा किया तो बादशाह ने इसकी ढलती अवस्था देखकर यह आधा दोहा पढ़ा—

युवन चलत तिय देह ते, चटक चलत किहि हेतु।

प्रवीनराय ने हाथ जोड़कर कहा—

मनमथ वारि मसाल को, सैंति सिहारो लेतु॥ १॥

बादशाह ने फिर यह आधा दोहा कहा—

ऊंचे व्है सुरबस किए, सम व्है नर बस कीन।

प्रवीन राय ने इसको भी यों पूरा किया—

अब पताल बस करन को, ढरकि पयानो कीन॥ २॥

बादशाह इसकी मिष्ट कविता से संतुष्ट होकर और भी वार्तालाप किया चाहते थे पर वह काम का समय था इसलिये छड़ीदार को हुक्म दिया कि इसको रात्रि में लाना परंतु प्रवीणराय ने इसका कुछ और ही अर्थ समझा और हाथ जोड़कर यह दोहा कहा।

बिनती रायप्रवीन की, सुनिए साह सुजान।
झूँठी पातर भखत हैं बारी वायस स्वान॥ १॥

बादशाह ने यह सुनते ही छड़ीदार को आज्ञा दे दी कि इसे जहाँ से लाया है वहीं पहुँचा दे तब प्रवीनराय अपने डेरे पर आई और केशव कवि को लेकर इंद्रजीत के पास गई वे इसका चरित्र सुनकर बहुत प्रसन्न हुए।

प्रवीनराय का बनाया कोई स्वतंत्र ग्रंथ तो देखने और सुनने में नहीं आया परंतु उसकी फुटकर कविता बहुत मिलती है उसमें से कुछ यह हैं।

छप्पै।

कमल कोक श्री फलरू मँभीर। कलधौत कलश हर॥

उच्च मिलन अति कठिन । दमक बहु स्वल्प नीलधर ॥
सरबर सरबन हेम । मेरु कैलाश प्रकासन ॥
निश बासर तरुवरहि । कँस कुंदन दिढ आसन ॥
इमि कहि प्रवीन जल थल अपक । अबिध मंजित तिय गौरि सँग ॥
कलि खुलित उरज उलठै सलिल । इंदु सीस इमि उरज ढँग ॥१॥

सवैया ।

छूटी लटें अलबेली सी चाल । भरे मुख पान खरी कटि छीनी ॥
चोरि नकारा उघारे उरोजन । मोतन हेरि रही जु प्रवीनी ॥
बात निशंक कहै अति मोहि सों । मोहि सों प्रीति निरंतर कीनी ॥
छाँडि महानिधि लोगन की । हित मेरो सो क्यों बिसरै रस भीनी ॥१॥

(२५) बाघेली विष्णुप्रसाद कुँवर जी ।

ये रीवाँ के महाराजा श्रीरघुराजसिंह जी की पुत्री और जोधपुर के महाराजा श्री जसवंतसिंह जी के छोटे भाई महाराज श्री किशोरसिंह जी *की रानी हैं इनका विवाह संवत् १६२१ में हुआ था ये भी बड़ी भगवत भक्त हैं श्री कृष्णचंद्र आनंद कंद को दीनानाथ कहकर रामानुज संप्रदाय की रीति से पूजती हैं और अपने हस्ताक्षर भी दीनानाथ के नाम से ही करती हैं इन्हों ने दीनानाथ का संगीन शिखरबन्ध मंदिर भी जोधपुर में अपनी फूफी, दादी बाघेली जी साहिब के मंदिर के पास ही बनाया है जिसकी प्रतिष्ठा वैशाख सुदी १२ संवत् १६४७ को हुई थी ।

इन्हों ने २ ग्रंथ "अवध बिलास" और "कृष्ण बिलास" बनाए हैं कविता इनकी बहुत रसीली और भगवत भक्ति के रंग से

---

* महाराज श्री किशोरसिंह जी का जन्म संवत् १६०५ में हुआ था और देहांत भादों बदि १ संवत् १६५५ को हुआ। बड़े डील जवान और बड़े बांके श्रीमान् थे।

रँगीली है कानपुर रसिक कवि सभा की समस्यायों पर हमेशा इनके कवित्त छपा करते हैं उनमें से कुछ यहाँ भी लिखे जाते हैं :—

सुंदर सुरंग अंग अंग में अनंग वारो।
जाके पद पंकज पे पंकज दुखारो है॥
पीत पटवारो मुख मुरली सँवारो प्यारो।
कुंडल झलक सिर मोर पंख धारा है॥
कोटिन सुधाकर की सुखमा सुहात जाके।
मुख मौं लुभाती रमा रंभा सी हजारो है॥
नंद को दुलारो श्री यशुदा को पियारो जौन।
भक्त सुखसारो सो हमारो रखवारो है॥ १॥
ल्यायो मोहि मंजुल निकुंज कुंज मध्य माँहि।
निस अँधियारी ना निहारी पर पो तले॥
तहाँ सखी छलिया छबीलो छल छंद करि।
छोड़ चलो लंगर मो जगल में एकले॥
डरपि डरपि जिय दरकि २ जाइ।
थर थर होत तन बिकल भई भले॥
वहाँ हेरि हारी हरि हरि के पुकारी पर।
मिले ना मुरारी वारी गए धौं कित चले॥ २॥
छोड़ि कुलकानि और आनि गुरु लोगन की।
जीवन सुएक निज जाहि हित मानी है॥
दरस उपासी प्रेम रस की पियासी जाके।
पद की सुदासी दया दीठ की बिकानी है।
श्री मुख मयंक की चकोरी ये सुखोरी बीच।
ब्रज की फिरत हैं व्है भोरी दुःख सानी है।
जिन्हें अति मानी चख पूतरी सी जानी ते।
हम सों यारि ठानी अब कुबरी मिठानी है॥ ३॥

दान में जो दीन्हों तीन पग के प्रमान भूमि।
भूल्यो है न ताहि बुद्धि मेटिबे न ताकी है॥
जोहिए जहां पै जो न होइ मोमही महेश।
लीजिए सुनाहि मोपै ममता न वाकी है॥
है जो न और कछु मेरे महाराज आज।
राखिए सलाज साज समै ये कृपा की है॥
जोपै वे पूरती भई न अबै आप की तो।
पूरिए मो माथ नाथ जौंन पग बाकी है॥ ४॥

राजन के राज महाराज मनु इन्द्र आदि।
नेक न गए धों कित उमर घटाय कै॥
नाहुष नृगादि निमि सगर युधिष्ठिरादि।
कोऊ ना रहत इत काल से छुटाय कै॥
तेरी माय तेरो बाप बापहू को बाप तेरो।
मरयो हाय हाय करि हिये हपटाय कै॥
ताते अज अमर अनन्दकन्द कृष्ण भज।
सोवै मोह राति किमि माया लिपटाय कै॥ ५॥

श्रीपद पंकज पंजर में फस गो हिय हंस कढ़ै किमि भाँती।
नैन चकोर श्रीमुखचन्द्र तजे न भजे किमि स्वामि स्वजाती॥
नाथ ये कंज से नैन के बाँण चुभे उर हाय महादुख पाती।
मीन से अम्बु ज्यों श्रीतन की बिलगावत ही न लगावत छाती॥६॥

राग देश।

आली री जिया पिय बिन धीर धरै ना॥
वह ब्रजचंद छैल की मूरति मम मन से उतरै ना।
लाख उपाय करों न धरौं चित पै क्षण इक बिसरै ना॥

कोटि मयंक रंक कर मुखमा सुख माही को हरै ना।
मृदुमुसकानि दन्त दुति जनु घनदामिनि केल करै ना॥
चंचल मीन पीन सरसिज सम सुन्दर दृग मृदु पैना।
देखतहीं चुभि जात हिये बिच नेकु जुगुति निकसै ना॥
कारे केश कुटिल कँटिया सम बेधत अस को बिधै ना।
विष्णुकुमारि हाय हरि कब मिलि हैं मिटिहै दुख सैना॥ १॥

(२६) विरजूबाई[1]।

ये सूर्यप्रकाश ग्रन्थकर्ता और जोधपुर के महाराजा श्री अभयसिंह जी के कविराज कविया जाति के चारण "करनीदानजी"[2] की बहन थीं और गीत कवित्त भी उन्हीं के समान सलोने और चटकीले बनाती थीं एक समय इनका एक छोटा भतीजा चाँपावत ठाकुर प्रतापसिंह मोहनसिंहोत के पास जाने लगा तो इन्हों ने एक गीत बना कर उसको याद करा दिया और कहा मेरा नाम मति लेना अपने नाम से ठाकुर को सुना देना।

उसने जब ठाकुर के पास पहुँच कर वह गीत सुनाया तो ठाकुर ने एक झड में चीते की जगह चीती कंत का शब्द सुनकर कहा कि यह गीत तो तेरा बनाया नहीं जान पड़ता किसी स्त्री का बनाया है निदान उसको सच कहना पड़ा ठाकुर ने प्रसन्न होकर दोनो को इनाम दिया वह गीत यह है।

केहा[1] सुचालो[2] ऐराकी[3]। नाव जेरा[4] की बाखाण कीजे॥
ताव जोड तेराकी। पैरा[5] की नार्ग[6] ताजँ[7]॥

---

१ विरजूबाई का नाम मीसण सूर्यमल जी ने भी वंशभास्कर में कविया स्त्रियों की सूची में लिखा है।

२ इनके वंश में अब कविराज गजदान जी गाँव आलावास परगने सोजत के जागीरदार हैं —

१ कैसा। २ अच्छा चलने वाला। ३ अरबी घोड़ा। ४ जैसा। ५ क्या। ६ हाथी। ७ सरीखा।

ऐराकी रूपगाँ आछाँ । नांखेँ रीझावर पतो ॥
रीझँद ऐराकी काछी । ऐहा बाजराज ॥ १ ॥
छछेहाँ बछेक रथा । राहणेस जूंप छके ॥
फाल मत्थाँ ठके खुराँ । डोहेणस फौज ॥
सोहणेस कार जाँ । आरोहणेस पातसाहाँ ॥
मोहणेस नंद देवै । एहातुरी मोज ॥ २ ॥
भूपलगाँ रूप लोभ । बोलदे दलाँला भाई ॥
रक्कमाँ अमोलदे । बड़ाई हेम रासँ ॥
नगासूँ तोलदं जरौं । खोलदे खखंधारी नीठ ॥
हाथी साई डोल देता । मोलदे हवास ॥ ३ ॥
ज्यौं तुराँ बाणाँसेँ धारों । सुराँ सदा भोम जीती ॥
छूटं नालाँ सेसमेह । अरीती छुडाण ॥
पात रती तांनगीस । रीतीपंथ बिनैं पंथो ॥
यूंसोंरे पैरीती । चीती कंत ज्यूं उडाण ॥ ४ ॥
रिजक्कौं उठाव ताव । आव जाव चक्री रूँसे ॥
भलक्काव चोबंदा । सलौंव बाँजें भाव ॥
पावभाव उच्चैश्रवा । हावभाव राहा पुरा ॥
रीझाँ चाव एहातुरी । भ्रवै‘‘ माल्याव ॥ ५ ॥
केता दोक चारसाल । पाँचाँरे छक्कारे केता ॥
हाथा लूँणवारे । धारे छत्रधारी हूँस ॥
देखियाँ पतार दिया इसाघोड़ा भूप दूजा ॥
रहे लोर लेखिया । चित्रामा तणी रूँस ॥ ६ ॥

---

१ अनोखा । २ प्रतापसिंह । ३ तातातेज । ४ न्यारा । ५ जुता । ६ मथनेवाला । ७ तरंग । ८ महानसिंह प्रतापसिंह का बाप । ९ सांने का ढेर । १० सौदागर ११ घोड़ा । १२ तलवार । १३ बिना । १४ सहारे । १५ लगाम । १६ बाकूर । १७ जैसा । १८ चमक ।

राजाराण दतावंत । साभले बखाणे रीझाँ ॥
कालजे सुमाण काँपे । अदेकाँन केक ॥
एकही बारेही भाण । केकाण न दीधो इसो ॥
इसा दे दूसरो भाँण । केकाण अनेक ॥ ७ ॥

(२७) विरंजी कुँवर।

ये गाँव गढ़वाड़ ज़िले जौनपुर के दुर्गवंशी ठाकुर अमरसिंह सुत साहबदीन की धर्म पत्नी थीं इन्होंने संवत १९०५ मे सती बिलास नाम १ ग्रंथ सती स्त्रियों के प्रसग का बनाया है जिस मे अपने पति और पिता पक्ष का परिचय इस प्रकार दिया है।

दोहा।

सूर्य वंश मे रघु भए। रघुवंशी श्री राम।
तासु तनय लव कुश भए। द्विवित पूरन काम ॥ १ ॥
द्विवित वंस उदित भए। दुर्गवंश महराज ॥
तिलक जुक्त शुभ शोभिजे। सत्य धर्म कर साज ॥ २ ॥
आदि सलख ते अखिल भे। तेहि ते भए निरंकार ॥
ताहि निरंजन सुत भयो। तेहि ते ब्रह्म उदार ॥ ३ ॥
सहस सीस को विश्रि भए। तेहि ते भे सत सीस ॥
अष्ट शीश ताके भए। कमलनाभि प्रजनीस ॥ ४ ॥
जो बरनों यहि भाँति से। बाढ़े ग्रंथ अपार ॥
ताही ते कछु स्वल्प करि। कहब बंस विस्तार ॥ ५ ॥
आदि अलख अरु सूर्य तें। पुस्त इग्यारह जान॥
पुस्त अठावन फिर गए। भे रघु परम सुजान ॥ ६ ॥

---

१ सुने। २ नहा इने वाले। ३ कितने एक। ४ दूसरा सूरज या भाण का पाता।

आठ पुस्त रघुबंश गै । तब जन्मे द्रगसेन ॥
रामचन्द्र जू को छनति । द्विाषत बंशनि सेन ॥७॥
प्रथम सेनि पद द्वित्त गए । जुग सत पुस्त प्रमान ॥
पाछे साढ़े तीन से । पाल सो पदवी जान ॥ ८ ॥
साहि, देव, औ, सींह, पद । पुस्त सहस गै बीत ॥
ताके पीछे समन नृप । निज पद पुर करि प्रीति ॥ ९ ॥
समन हुते फिर बानवे । गई पुस्त एहि भाँति ॥
गरिबसाहि राजा भए । दुर्गदास जेहि नाति ॥१०॥
दुर्गदास बल बुद्धि से । बसि लीन्हे गड़वार ॥
महा तेज ताको जगे । शत्रु भए संहार ॥ ११ ॥
ताके तेरहीं पुस्त भे । अमरसिंह हरि भक्त ॥
तासु तनय मम कंत हैं । जानत है तेहि भक्त ॥ १२ ॥
जैसे बासन कोटि सोँ । बास सो लघुवर होय ॥
कितनो दिन जो बीतई । बाँस कहावे सोय ॥ १३ ॥
त्यौंही विधि महाराज के । वंश प्रसिद्ध उदार ॥
तहँ तें सब नर कहत हैं । श्री महाराज कुमार ॥ १४ ॥

सोरठा ।

रामचंद्र कर दास । अमरसिंह मन बचन तैं ॥
पुत्र होन की आस । सेयो हरि पद कमल दृढ़ ॥ १५ ॥

दोहा ।

सेवत वंश गोपाल के । तेहि सुत साहबदीन ॥
सो प्रभु तत्व विचारि कै । रहत ब्रह्म मे लीन ॥ १६ ॥

विरंजी कुँवरि के मायक पक्ष विषय ।

दोहा ।

अब भाखों माइक अचल । काशी शुभ अस्थान ॥

जाके दरसन हेत हित । देव करहिं प्रस्थान ॥१७॥
विमल वंश रघुवंश के । बड़े वयाल सरोह ॥
ग्राम नेवादा में विदित । मम पितु सीतलसींहँ ॥ १८ ॥

चौपाई ।

जिले जौनपुर में गडवारा । दुर्गवंश तहँ बसहिं उदारा ॥
कोल्ह आम कुटी तृन साला । तहँ बसि कंत बितावत काला ॥
तहाँ ज्ञान, अनुभव, हम पाए । सो करि प्रगट ग्रंथ में गाए ॥
बान सून्य अरु अंक मिलाई । तापर चंद (१८०५) देहु पुनि भाई ॥
अंक रीति सन रचेउ बनाई । ....
सून्य सप्त मुनि इन्दु (१७७९) बखानो । यथा अंक साके यह जानो ॥
सावन सित पूनव जब आई । तब मेरे मन हुलसत भाई ॥
जाँचेउ धर्म पतीव्रत केरा । जेहिंनें करहुँ सब धर्म बसेरा ॥
को पतिवृता कवन व्यवहारू । कवन धर्म त्रिय सुगति सिंगारू ॥
कवनि वृत पति के पिय भाखो । जेहिं हित जीय देह में राखो ॥
अब पिय निरनय देहु बताई । मैं गवारि कछु जानि न पाई ॥
करौं सदा पति पद कर पूजा । जानौ देव अवर नहिं दूजा ॥
पढ़ौं सुनौं पति संग पुराना । बूझौं वेद शास्त्र कर ज्ञाना ॥
आत्म ज्ञान अरु तत्व विभेदा । ब्रह्मज्ञान कछु भाषित वेदा ॥
सो सब सुनत रहौं दिन राती । एक लालसा मो मति माती ॥
जोरि दुवो कर पति सन पूछा । एह तो धर्म त्रियन कह छूछा ॥
कहौ धर्म पतिवर्त विचारा । जेहि मुनि नारि जाहिं भव पारा ॥
किमि करि रहे चरन मह सेवा । जेह धर्म नारि होइ देवी ॥

सवैया ।

तीरथ वृत सों नेह नहीं । अरु मानों नहीं कुछ देव पुजारी ॥

चाल कुचाल हमें नहिं मालुम । यातें कहें सब लोग गँवारी ॥
ज्ञान विवेक कहा लहे नारि । सदा जेहि निर्धन संत बिचारी ॥
तातें "विरंजि" विचारि कहै । मोहि देहु सियापति कंत सों यारी ॥

सवैया ।

होय मलीन कुरूप भयावनि । जाहि निहारि विनात हैं लोगू ॥
सोंऊ भजे पति के पदपँकज । जाय करे सति लोक में भोगू ॥
ताहि सराहत हैं विधि शेष । महेश बखाने त्रिसारि कै जोगू ॥
यातें विरंजि विचारि कहे । पति के पद की तिय किंकरि होजू ॥१॥

(२८) विहारी सतसई के कर्त्ता की स्त्री ।

विहारी सतसई की १ टीका ठाकुर कवि ने संवत १८६१ में बनाई है उसमें के ४६ दोहे छपरे के सुविख्यात पंडित अम्बिकादत्त जी ने "बिहारीबिहार" में उद्धृत किए हैं जिनका यह आशय है कि सतसई बिहारी जी की नहीं उनकी स्त्री की रची हुई है ।

दोहा ।

विप्र विहारी मुद्ध भो । बृजवासी सुकुलीन ॥
ता तिय इति कविता निपुन । सतसैया तिहिं कीन ॥ १ ॥

और यह दोहा भी जो सतसई बनने का मूल है उसी का कहा हुआ है ।

नाहिं पराग नहीं मधुर मधु, नहिं विकास एहि काल ।
अली कली ही सों बँध्यो, आगे कौन हवाल ॥ २ ॥

फिर ये दो दोहे भी जो बुंदेलखंड नरेश छत्रशाल बुंदेला के पास भेजे गए थे उन्हीं पंडितानी जी के बनाए हैं ।

तो अनेक औगुण भरी, चाहे याहि बलाइ।
जो पति सम्पति हू बिना, यह पति राखे जाइ ॥१॥
दूर भजत प्रभु पीठि दे, गुन बिस्तार न काल।
प्रगटत निरगुन निकट ही, चंग रंग गोपाल ॥ २ ॥

इस लेख का तात्पर्य यह है कि बिहारी जी की स्त्री भी परम प्रवीन और काव्य कुशला कविया थीं। सतसई बनाने में अपने पति की सहायक रही थीं। यह बात उसी ग्रंथ के एक टीकाकार की लिखी हुई है जिसने सतसई के *निर्माण काल से १४२ वर्ष पीछे वह टीका बनाई है।

(२९) बिहारीदास की पुत्री।

सुना है कि बिहारीजी की स्त्री के समान उनकी पुत्री भी चतुर सुजान थी। एक समय जोधपुर के महाराजा जसवंतसिंह जी के डेरे मथुरा में हुए थे। बिहारीजी भी वहीं थे उन्होंने अपनी सतसई लेजाकर महाराजा के अर्पण की। महाराज ने उसमें से पढ़कर मरुभाषा में कहा कि बिहारी थारी कविता में तो सूलो लाग गयो है।

† बिहारीदास उदास होकर घर आए क्योंकि मारवाड़ी बोली में सूला लग जाना नाज में घुन लग जाने को कहते हैं जिसका तात्पर्य बिहारी जी ने अपने मन में यह समझा कि महाराजा ने मेरी कविता को सड़ी गली बताकर उसमें कीड़े पड़ जाने का दोष लगाया है परन्तु पुत्री ने वह बात सुन और समझकर कहा कि पिता जी उदास होने की कोई बात नहीं है महाराजा काव्य में जैसे कुशल हैं वैसेही उन्होंने आपकी कविता का बखान किया है अर्थात् तुम्हारी कविता अब सजीव हो गई है निर्जीव नहीं रही है।

---

* बिहारी सतसई संवत १७१९ में बनी है।

† असल नाम तो बिहारीदास था पीछे से लोगों ने दास की जगह लाल जोड़ दिया है। इसका प्रमाण कविरत्नमाला में दिया गया है।

बिहारीजी यह सुनतेही क्षमा माँगने को महाराजा की सेवा में गए और प्रार्थना करने लगे कि मैं आपके महा वाक्य के गंभीर अर्थ को नहीं समझा था जिससे उदास हुआ था पर मेरी पुत्री ने समझा दिया तो क्षमा माँगने को आया हूँ।

महाराजा ने कहा कि हमने तो वह बात यह जान कर कही थी कि तुम कवि हो समझ लोगे।

(३०) बृजदासी।

महाराणी बाँकावतीजी।

ये *लिवाण के कछवाहा राजा आनंदरामजी उदेरामोत की पुत्री थीं इनका नाम ब्रजकुँवर बाई था और सुसराल अर्थात् किसनगढ़ में रानी बाँकावत जी कहलाती थीं क्योंकि लिवाण के राजाजी जो आमेर के सुप्रसिद्ध महाराजा मानसिंहजी के काका भगवानदास जी के वंशज हैं बाँकावत कछवाहा कहलाते हैं। अकबर बादशाह भगवानदास जी को बाँका कछवाहा कहा करते थे जिससे उनकी संतान का नाम बाँकावत होगया है और इनकी बेटियाँ ससुराल में बाँकावतजी पदवी से पुकारी जाती हैं।

बाँकावत ब्रजकँवरि जी का विवाह वैशाख सुदि ११ संवत् १७७६ को किशनगढ़ के महाराज राजसिंह जी से वृंदावन में हुआ था बरात मथुरा से गई थी ये राजसिंह जी की दूसरी रानी थीं पहिली रानी राजावतजी इनके विवाह होने से एक वर्ष पूर्वही संवत १७७५ में मरचुकी थीं जिससे इनका आदर सतकार बड़ी रानी के समान ही दरबार में रहा इनसे २ संतान हुई।

१ महाराज कुमार बीरसिंह
२ सुंदर कुँवार बाई

बीरसिंह जी को जागीर में रलावता नाम ग्राम मिला था जहाँ अब उनके वंश में रुलावत के राजा जी हैं और सुंदर कुँवर बाई का विवाह कोटड़े के महाराज खीची बलवंतसिंह जी से हुआ था।

* लिवाण जयपुर राज्य में है जहाँ के राजा अब अचलराम जी हैं।

महारानी बाँकावतजी की कविता में बड़ी रुचि थी। स्वयं भी कविया थीं। जो कविता करती थीं उनमें अपना नाम ब्रजदासी रखती थीं। कृष्ण भक्ति में परायण थीं। इसी प्रसंग से श्री मद्भागवत का उलथा भाषा में छंदोबद्ध किया था जो ब्रजदासी भागवत के नाम से प्रसिद्ध है और भक्त लोग उसका पठन पाठन किया करते हैं। जोधपुर में भी यह ग्रंथ रामस्नेही साधु आरतरामजी के पुस्तकालय में है वहीं से हमने भी मँगाकर यह भूमिका उसकी उद्धृत की है ॥

श्री रामायनमः । महाराजाधिराज महाराज श्री राजसिंह जीरं महाराणीं जी साहिब बाँकावतजी कृत श्री भागवतं प्रथम स्कंधे भाषा लिख्यते ।

छप्पय छंद ।

नमो नमो श्री हंस नमो सनकादि रूप हरि,
नमो नमो श्री नारद देवऋषि जग को सम सरि ।
नमो नमो श्री व्यास नमो शुकदेव जु स्वामी ॥
नमो परीक्षित राज ऋषिन मैं मुख्य है नामी,
नमो नमो श्री सूत जू, नमो नमो सौनक सकल ।
नमो नमो श्री मद्भागवत कृष्ण रूप क्षिति में अकल ॥

दोहा ।

श्रीगुरु पद बंदन करूँ । प्रथमहि करूँ उछाह ॥
दंपति गुरु तिहुँ की कृपा । करो सकल मो चाह ॥ १ ॥
बार बार बंदन करौं । श्री वृषभान कुँवारि ॥
जय जय श्री गोपाल जू । कीजै कृपा मुरारि ॥ २ ॥
बंदौं नारद व्यास शुक । स्वामी श्रीधर संग ॥
भक्ति कृपा बंदौं सुखद । फलै मनोरथ रंग ॥ ३ ॥
कियो प्रगट श्रीभागवत । व्यास रूप भगवान ॥

यह कलितमं निरवार हित । जगमगात ज्यौं भान ॥ ४ ॥
कन्यो चहत श्रीभागवत । भाषा बुद्धि प्रमान ॥
करि गाहे मुहि सामर्थ हरि ! देहैं क्रपानिधान ॥ ५ ॥

चौपाई ।

व्याम भागवत आरँभ माँही । प्रभु को आन हृदय सरसाँही ॥
ऐसो बचन कहत मुनि आन । प्रभुसों परम प्रेम उर ठान ॥ ६ ॥
परम प्रेम परमेश्वर स्वामी । हम तिहि ध्यान धरत हिय ठामी ॥
यहै त्रिविध झूठो संसार । भाँति भाँति बहु बिधि निरधार ॥ ७ ॥
अरु साँचो सो देत दिपाई । सो सतिता प्रभुही की छाई ॥
जैसे रेत चमक मृग देखैं । जल की भ्रम मन माहिं संपेखैं ॥ ८ ॥
जल भ्रम झूठ रेतही सत्य । भ्रम सों दीस परत जल छत्य ॥
जल भ्रम काँच माँहि ज्यौं होत । सो झूठो सति काँच उदौत ॥९॥
यौं झूठो सबही संसार । साँचो है स्वामी करतार ॥
प्रभु में नहिं माया संबंध । न्यारो हरि ते माया बंध ॥ १० ॥
उपजन पालन प्रलय संसार । होत सबै प्रभु सों विस्तार ॥
व्यापत ह्वै रह्यो प्रभु सब ठौर । जगमगात जग में जग मौर ॥ ११ ॥
सबहि बस्तु को प्रभुही ग्याता । आप प्रकास रूप सुखदाता ॥
हृदै बीच विधि के जिन आय । दीने चारूं वेद पढ़ाय ॥ १२ ॥
जिन वेदन में बड़ेड़े पंडित । मोहित होय रहें गुन मंडित ॥ १३ ॥

दोहा ।

अबै व्यास जू कहत हैं । यह भागवत माँहि ॥
धर्म सबै निहकाम अब । बर्नन करि सुख पाँहि ॥ १४ ॥

(३१) शेख रंगरेजिन ।

शेख और आलम की कविता सूर्य के समान सारे हिन्दुस्थान

में भासमान है। आलम प्रथम ब्राह्मण जाति के व्यक्ति थे कोई कन्नोजिया कहते हैं और कोई सनाढ्य बनाते हैं। वे अकबर बादशाह के कवियों में नौकर थे और एक रंगरेजिन के प्रेम रंग में डूबे हुए थे जो इनके सतसंग से काव्य के रहस्य को समझ गई थी और कविता भी करने लगी थी। एक दिन आलम अपनी पगड़ी इसे रँगने को देगए इसने रँगते समय उसके छोर में कागज़ का एक परचा बँधा देखा खोला तो उसमें ये ३ पद नेत्रों की प्रशंसा के लिखे थे–

प्रेम रँग पगे जगमगे जागे जामिनी के।
जोबन की जोति जगि जोर उमगत हैं॥
मदन के माते मतवारे ऐसे घूमत हैं।
झूमत हैं झुकि झुकि झंपि उघरत हैं॥
आलम सो नवल निकाई इन नैनन की।
पाँखुरी पदुम पै भँवर थिरकत हैं॥

इसने उसके नीचे यह चौथा पद लिख कर कवित्त पूरा कर दिया—

"चाहत हैं उड़िबे को देखत मयंक मुख।
जानत हैं रैनि ताते ताहि में रहत हैं॥"

जब आलम ने वह पगड़ी लेजाकर चौथे चरन को पढ़ा तो वे तुरंत रँगरेजन के पास पीछे आए। वह उस समय घर में बैठी रोटी खा रही थी। इन्होंने पूछा कि यह चौथा चरन किसने लिखा है तो वह हाथ जोड़ खड़ी होगई और बोली कि साहब मैं ने लिखा है। यह सुनकर आलम के हृदय में प्रेम और प्रसन्नता का इतना कुछ आवेश हुआ कि बिस्मिल्लाह कहकर उसके संग भोजन करने को बैठ गए। रँगरेजिन भी अपने पति और घर को छोड़कर उनके साथ हो गई और वे भी अपने कुटुंब से अलग होकर उसके पास रहने लगे। रंगरेज ने बादशाह से पुकार की। बादशाह ने सब वृत्तान्त जान कर उसको दूसरी स्त्री करने के लिये रुपया दिया जिससे ये दोनों निश्चिंत होकर काव्य रस का मज़ा लेने लगे।

इनके यथार्थ नाम क्या थे सो तो कुछ जाना नहीं जाता पर कविता में रँगरेज का नाम शेख़ और ब्राह्मण का नाम आलम प्रसिद्ध है और रँगरेजिन को घरमें रक्खे पीछे वे मुसलमान होगए थे।

इन दोनों की कविता का संग्रह हमारे पास है जिसमें ५०० के लगभग कवित्त और सवैये हैं उनमें के ये ४ कवित्त यहाँ लिखे जाते हैं—

कवित्त।

आछे आछे खीर सेत मंदाकिनी नीर सेत
सु रति के सीखे सुख तीखे खरहरे से ।
कैधौं नीलि नलिनी की पाँति कान्ति चली जात
किधौं अरविन्द तें भँवर हरबरे से ॥
कैधौं सहकार फारि सु रंग पखारि सेख
आछे उनहारि मृग मीन पर हेरे से ।
ऐसे नैन लिए स्याम आए सखी मेरे धाम
दुति तनहू तें काम बान सर हेरे से ॥ १ ॥

कवित्त।

अजहूँ तो औधि हरि सारंग की दूरि आली
तव तन बिरह मरोरि मीज मारेगो ।
उदित रिसानो तातो रातो पै रहत विधु
बढेहू ते शेख वैस केसिक उतारेगो ॥
होनी है सु होइ सुनि छरो दुख दारक है
चन्द्रमा की चाँदनी बिनाही लोग सारेगो ।
कहत हौं राहु तोहिं रिस तें निगलि याहि
याहि निज छाँड़ि देह विरहिनी चढ़ि मारेगो ॥ २ ॥

कवित्त।

ओप अंग राग रंग रीसि* रहि सखी संग।
बारिज बदन तन लचकानि चार सी॥
बैठी पान खाति ही साखियन के मध्य तहाँ।
बाँसुरी बजाइ शेख मोहन महा रसी॥
चित्त चल्यो तानन कों, बीरी चली कानन कों।
चूना लावैं आनन को रही न सँभारसी॥
लागी देह काँपनी रही न सुधि आपनी सु।
ढपनी मे मुख देखे भूलि गई आरसी॥ ३॥

कवित्त।

जब तें गुपाल मधुबन को सिधारे माई।
मधुबन भयो मधुदानव विषम सो॥
शेख कहे सारिका शिखंडी खंजरीट शुक।
मिलि कें कलेस कीनो कालिंदी कदम्ब सों॥
जामिनी बरन यह जामिनी में जाम जाम।
बधिवे कों जुवति सुनावै टेरि जम सों॥
देह कों करंक करे चारायों ये चाहति हे।
काल भई कोकिल कल गाए करे हम सों॥ ४॥

(३२) श्री सरस्वती देवी।

ये गाँव नागदा ज़िले आज़मगढ़ के कवि रामचरित्रजी की पुत्री हैं हमने इनकी कविता कानपुर के मासिकपत्र रसिकमित्र में छपी देखकर इनके पिता की सेवा में ऊपर के पते से पत्र भेजा था कि

---

* रीझि।

इनका कुछ वृतांत लिख भेजें परन्तु पत्र लौट आया तब उक्त पत्र के संपादक जी को लिखा कि वेही कुछ जानते हों तो लिखें लेकिन उनके उत्तर से भी कोई बात नहीं जानी गई इस कारण हम विशेष परिचय इन सरस्वती जी का नहीं लिख सके केवल उनकी कविता जो रसिकमित्र में मिली थी यहाँ लिख देते हैं *।

नैन कजरारे कोर वारे धनु भौंह तान।
मारत निसंक बान नेकु ना डरत हैं॥
वेसर विशेष वेशकीमत जड़ाव देखि।
तारन समेत तारापति हहरत हैं॥
अधर कपोल दंत नासिका बखानौं कहा।
केश की सुवेस लखि शेष कहरत हैं॥
श्री फल कठोर चकूवाक से निहारे तेरे।
उरज अमोल गोल घायल करत हैं॥

होरी सवैया।

ऐसी नहीं हम खेलनहार विना रस रीति करें बरजोरी।
चाहे चलौं तजि मान कहो फिरि जाहिं घरे वृषभान किशोरी॥
चूक भई हममे तो दया करि नेकु लखो सखियान कि ओरी।
ठाड़ी अहैं मन मारि सबैं बिन तोहि बनें नहिं खेलत होरी॥

सवैया।

ऊधव जाय कहो उनसों पठई पतियाँ जिन युक्ति भरी हैं।
ज्ञानी वही जग जाहि रहैं जिनसों नहिं नाइन हूँ उबरी हैं॥
साधन योग स्वतंत्र समाधि विरक्त भलो जगसों कुबरी हैं।
ये ब्रजबाल बिहाल महान वियोग की मारु प्रचंड परी हैं।

---

* पंडित रामचरित्र तिवारी अच्छे कवि थे डुमराँव के महाराजा राधाप्रसाद सिंह के सी एस आई की सभा में रहते थे यह उनकी पुत्री हैं, कविता अच्छी करती हैं अभी वर्तमान हैं ग्रन्थमाला सम्पादक

(३३) सहजोबाई।

ये महात्मा चरणदासजी[1] की चेली और उन्हीं की जाति के दूसरे हरिप्रसाद की कन्या थीं और उन्हीं के सतसंग से इनको भी भगवत भक्ति का रंग लग गया था जिसमें डूबकर उन्होंने भी अपने गुरु की नाँई प्रेमरस भीनी कविता की है और कई ग्रंथ भक्ति, ज्ञान, वैराग, और सदुपदेश के बनाए हैं जिनमें से सहजोप्रकाश हमारे देखने में आया उसमें से ये २ अंग नान्हा माहात्म्य और प्रेम के यहाँ लिखते हैं।

नान्हा माहात्म्य का अंग।

दोहा।

धन्य छोटा पण सुख महा, धिरक बड़ाई छार।
सहजो नान्हाँ हूजिए, गुरु के बचन सँभार॥ १॥
सहजो तारे सब सुखी, गहै चंद अरु सूर।
साधू चाहैं दीनता, चहैं बड़ाई क्रूर॥ २॥
अभिमानी नाहर बडो, भरमत फिरत उजार।
सहजो नान्ही बाकरी, प्यार करै संसार॥ ३॥
सीस कान मुख नासिका, ऊंचे ऊँचे नाव।
सहजो नान्हाँ कारने, सब कोइ पूजै पाव॥ ४॥
नान्हीं चीटी भवन मे, जहाँ तहाँ रस लेह।
सहजो कुंजर अति बड़ा, सिर में डारै खेह॥ ५॥
सहजो दोयज चाँद का, दरस करै सब कोय।
नान्हैं सो दिन दिन बढ़ै, अधकी चाँद न होय॥ ६॥
बड़ा भए आदर नहीं, सहजो आँखन देख।

(१) चरणदासजी का जन्म गाँव देहरा जिले मेवात अन्तर्गत राज अलवर में भादों सुदि ३ मंगलवार संवत १७६० का हुआ था।

कला सभी घट जायगी, कछू न रहसी रेख ॥ ७ ॥
सहजो नान्हाँ बालका, महल भूप के जाय ।
नारी परदा ना करैं, गोदहि गोद खिलाय ॥ ८ ॥
बड़ा न जाने पायहै, साहब के दरबार ।
द्वारेही सूँ लागिहैं, सहजो मोटी मार ॥ ९ ॥
बाले दीखे चाँद माँ, बड़ा भए अँधियार ।
सहजो तृण हलका तिरे, डूबे पत्थर भार ॥ १० ॥
भली गरीबी नवनता, सके न कोई मार ।
सहजो रूई कपास की, काटे ना तरवार ॥ ११ ॥
चरणदास सतगुरु कही, सहजो कूँ यह चाल ।
सके तो छोटा हूजिए, छूटें सब जंजाल ॥ १२ ॥
साहन को तो भै घना, सहजो निर्भै रंक ।
कुंजर के पग बेड़ियाँ, चींटी फिरे निसंक ॥ १३ ॥
ऊंचे ऊज्जल भागसूँ, आय मिले गुरु देव ।
प्रेम दिया नान्हाँ किया, पूरन पायो भेव ॥ १४ ॥
सहजो पूरण भाग सैं, पाय लिए सुख दान ।
नख सिख आई दीनता, भजे बड़ाई मान ॥ १५ ॥
सहजो पूरन भाग सूँ, पाय लिए सुखदैन ।
गए कुलक्षण देह सूँ, लक्षन पायो चैन ॥ १६ ॥
औगन थे सो सब गए, राज करैं उनतीस ।
प्रेम मिला प्रीतम मिला, सहजो वारा सीस ॥ १७ ॥

प्रेम का अंग ।

दोहा ।

चरणदास सतगुर दिया, प्रेम पियाला आन ।

सहजो मतवारे भए, तुरिया ततगल तान ॥ १ ॥
प्रेम दिवाने जो भए, मन भो चकनाचूर।
छके रहैं घूमत रहैं, सहजो देख हजूर ॥ २ ॥
प्रेम दिवाने जो भए, प्रीतम के रङ्ग माहिँ।
सहजो सुध बुध सब गई, तनकी सोधी नाहिँ ॥ ३ ॥
प्रेम दिवाने जो भए, कहैं वहकते बैन।
सहजो मुख हाँसी छुटे, कबहूँ टपके नैन ॥ ४ ॥
प्रेम दिवाने जो भए, पलट गयो सब रूप।
सहजो दृष्ट न आवई, कहा रंक कहा भूप ॥ ५ ॥
प्रेम दिवाने जो भए, जात वरन गइ छूट।
सहजो जग बौरा कहै, लोग गए सब फूट ॥ ६ ॥
प्रेम दिवाने जो भए, नेम धरम गयो खोय।
सहजो नर नारी हँसै, वा मन आनन्द होय ॥ ७ ॥
प्रेम दिवाने जो भए, सहजो डगमग देह।
पाँव पड़ैं कित के कितौ, हरि सँभाल जब लेह ॥ ८ ॥
कबहूँ हक धक हो रहै, उठे प्रेम हित गाय।
सहजो आँख मुदी रहै, कबहूँ सुधि हो जाय ॥ ९ ॥
मन मैं तो आनन्द है, तन बोरा सब अग।
ना काहू के संग है, ना कोई सहजो संग ॥ १० ॥
प्रीत लटक दुर्लभ महा, पावै गुरु के ध्यान।
अजपा सुमरन कहत हैं उपजै केवल ज्ञान ॥ ११ ॥

चरणदास जी की जन्म बधाई राग मल्हार।

सखीरी आज धनि धरती धनि देसा।
धन "डहरा मेवात" मँझारे। हरि आए जन भेसा ॥

धनि भादों धनि तीज सुदी है । धनि दिन मंगलकारी ॥
धनि दूसर कुल बालक जनमो । फुलत भै नर नारी ॥
धनि धनि माई कुंजो रानी । धनि मुरलीधर ताता ॥
अगले दत्तव अब फल पाए । तिनके सुत भयो ज्ञाता ॥
भरम नसावन भक्ति बढ़ावन । बहु पारायन करता ॥
सब फलदायक सब कुछ लायक । अघ मोचन दुख हरता ॥
अनगिन बरस बहुत चिरजीवो । गुरु सुखदेव सहाई ॥
सहजों बाई देत असीसें । पावै दरस बधाई ॥ १ ॥

राग मल्हार ।

सखीरी आज जनम लियो सुखदाई ।
दूसर कुल में प्रगट हुए । बाजत अनन्द बधाई ॥
भादों तीज सुदी दिन मंगल । सात घड़ी दिन आए ॥
संबत् सतरह साठहु ते तब । शुभ समयो सब पाए ॥
जैजैकार भयो सखि गाऊ । मात पिता मुख देखो ॥
जानत नाहिंन कौन पुरुष हैं । आए हैं नर भेखो ॥
संग चलावन अगम पन्थक् । सूरज भक्त उदैको ॥
आप गुपाल साध तन धारो । निहचे मो मन ऐसो ॥
गुरु सुखदेव नाम धर दीन्हों । चरणदास उपकारी ॥
सहजो बाई तन मन वारे । नमो नमो बलिहारी ॥ २ ॥

(३४) सुन्दर कुँवरि बाई ।

ये रूपनगर तथा कृष्णगढ़ के राठोड़ वंशी महाराजा राजसिंह जी की बेटी थीं इन का जन्म कातिक सुदी ९ संबत् १७९१ को दिल्ली में महारानी बाँकावत जी से हुआ था इनके सगे भाई तो बीरसिंह जी थे और सौतेले भाई सुखसिंह जी, फतहसिंह जी, सावंत सिंह जी, और बहादुरसिंह जी थे जो सब बीरसिंह जी से बड़े थे ।

महाराज राजसिंह जी संवत १७६३ में राजसिंहासन पर बैठे थे इनके ऊपर लिखे पाँचों बेटों में से सावंतसिंह जी तो पाटवी ठहराए गए थे* बहादुरसिंह जी दिल्ली में मोहम्मदशाह बादशाह की सेवा में रहते थे उन के पास कृष्णगढ़ से खर्च नहीं पहुँचता था उधर दिल्ली का ढचर भी बिगड़ा हुआ था इसलिये वे वहाँ से अजमेर में आकर जोधपुर के महाराजा श्री अभयसिंह जी के आ-श्रित होगए और उन्हों ने राजसिंह जी पर दबाव डालकर बहादुर सिंह जी को सरवाड़ का परगना दिलवा दिया फिर सावंतसिंह जी (उपनाम नागरीदास जी) दिल्ली गए और यहाँ राजसिंह जी का देहांत संवत १८०५ में हो गया तो बहादुरसिंह कृष्णगढ़ में आकर गद्दी पर बैठ गए संवत १८०६ में सावंतसिंह जी आकर उनसे लड़े पर जीते नहीं और वृंदावन में अपने गुरु के पास जाकर भगवत भक्ति करने लगे इनके कुँवर सरदारसिंह जी थे उन्होंने मरहटों की सहायता लाकर संवत १८१३ में बहादुरसिंह जी से आधा राज बँटवा लिया।

बहादुरसिंह जी के बँट में कृष्णगढ़, सरवाड़, फतहगढ़, बाँदरा, सींदर तथा कुचील के परगने रहे और सरदारसिंह जी के भाग में रूपनगढ़ (रूपनगर) अराई, सलेमाबाद, और कर-केड़ी के परगने आए।

फिर दोनों चचा भतीजों में मिलाप होगया और सरदारसिंह जी के संतान न होने से बहादुरसिंह जी ने अपने इकलौते बेटे बि-ड़दसिंह जी को उनकी गोद में देदिया जो संवत १८२३ में सर-दारसिंह जी के और संवत १८६३ में अपने पिता बहादुरसिंह जी के भी उत्तराधिकारी होकर १० वर्ष पीछे धाम प्राप्त होगए फिर उनके कुँवर प्रतापसिंह जी गद्दी पर बैठे जो संवत १८५४ तक वि-द्यमान रहे थे।

ये सब घटनायें सुन्दर कुँवरि बाई के तरुणावस्था में हुई और उन्हीं बाधाओं से वे ३१ वर्ष की अवस्था तक कुँवारी रहीं

* क्योंकि सुखसिंह जी तो बाप को विष देने के उद्योग में पकड़े जा चुके थे और फतहसिंह मरगए थे।

थीं निदान महाराजा सरदारसिंह जी ने इनका विवाह रूपनगर में राघोगढ़ * के खीची महाराजा-बलभद्रसिंह के कुँवर बलवंतसिंह जी से बैशाख सुदि १४ संवत १८२२ को किया क्योंकि इन के भाई बीरसिंह † जी सरदारसिंह जी के पक्ष में थे और यही कारण इनके विशेषतर रूपनगर में रहने का था ।

विवाह के पश्चात ये राघोगढ़ में गईं और वहाँ रसपुंज ग्रंथ संवत १८३४ में बनाया जैसा कि इस दोहे में कहा है ।

यह पुस्तक की बारता, बेद गूढ़ मति गाय ।
प्रगट भयो खीची घराँ, राघवगढ़ सुखदाय ॥

और इसके पीछे उनको फिर वही विपता भुगतनी पड़ी जो पीहर में भाइयों के विरोध और मरहटों के आक्रमण से भुगती थी क्योंकि इनके पति से पहिले तो हुलकर ने करलेने के वास्ते लड़ाई ठानकर छबड़ा और गूगोर के परगने लेलिए फिर सेंधिया ने भी सेना भेजकर कर माँगा तो आरोन और झाझोन के दो परगने उनको भी देकर पीछा छुड़ाया पर सेंधिया के सरदारों की तृष्णा शांत न हुई और उन्होंने बलवंतसिंह जी को पकड़कर ग्वालियर, और कुँवर जयसिंह जी को भेलसे के किले में कैद कर दिया और राघोगढ़ लेलिया ।

निदान बलवंतसिंह जी ने अपने कुटुंबी खीची सरदार शेरसिंह जी की बीरता और जयपुर जोधपुर के महाराजों की सहायता से संवत १८३७ में फिर राघोगढ़ पाया और कुछ काल पीछे परलोक को गवन किया कुँवर जयसिंह राघोगढ़ के राजा ‡ हुए उनसे फिर महाराजा सिंधिया ने राघोगढ़ छीन लिया और उनके सरदारों से लड़ते लड़ते संवत १८७५ में मरगए तब उनकी रानी ने अजीतसिंह को गोद लिया जिन्हें अंगरेजी सरकार ने महाराजा दौलतराव सेंधिया से राघोगढ़ दिला दिया ।

---

* कृष्णगढ़ की ख्यात में कोटड़ा लिखा है ।

† बीरसिंह जी की सन्तान में रलावत के राजा जो कृष्णगढ़ के राजावियों में हैं ।

‡ इन्होंने अपनी छाप में यह सोरठा खुदाया था ।

श्री रघुबर परताप पवनपुत्र बल पाय के
या सिक्का पर छाप महाराज जयसिंह की

इस आपत काल में सुन्दर कुंवरि बाई कहाँ रहीं इसका ठीक पता नहीं लगता है पर संभव है कि *रूपनगर, किंवा कृष्ण-गढ़, अथवा †सलेमाबाद में रही होंगी जो उनके कुल का गुरु द्वारा है और जहाँ के गोस्वामी वृन्दावनदेव जी की उन्हों ने अपने ग्रंथों में ठौर ठौर स्तुति की है जिसमें से २ कवित्त संकेत-युगल ग्रंथ के आगे लिखे जायगे।

उनका अंतकाल कब और कहाँ हुआ यह भी कुछ निश्चय नहीं है परन्तु उनके अन्तिम ग्रंथ का निरमाण काल संवत् १८५३ है जब कि उनकी अवस्था ६३ वर्ष की हो गई थी इसके पीछे वे किसी वर्ष महाराजा प्रतापसिंह जी के समय में धाम प्राप्त हुई होंगी इनके कोई औरस पुत्र नहीं हुआ था राजा जयसिंह खीची इनके सवतेले बेटे थे।

यह तो संक्षिप्त वृत्तान्त सुन्दर कुंवरि बाई जी के जीवन चरित्र का हुआ अब कुछ वर्णन उनकी कविता का किया जाता है।

इन बाई जी का जन्म जिस राज कुल में हुआ था वह कवि कुल भी था। और कवियों को आश्रय देना तो उसका मुख्य कर्तव्य था।

इनके पिता राजसिंह जी, दादा मानसिंह जी, परदादा रूप-सिंह जी, जिन्हों ने रूपनगर बसाया है उत्तम कविता करते थे इनके भाई नागरीदास जी, बहादुरसिंह जी, भतीजे बिड़दसिंह जी भी बड़े कवि थे इनकी माता रानी बाँकावत जी भी कविया थीं जिनकी बनाई हुई *भाषा भागवत भगवत भक्तों में परम प्रेम से* पढ़ी पढ़ाई जाती है उसका नाम ब्रजदासी कृत भागवत है क्यों कि वे कविता में अपनी छाप ब्रज दासी धरती थीं फिर इनकी भतीजी छत्र कुंवरि बाई भी पद योजना में कुशल थीं और तो क्या इनके घर की दासियाँ भी कविता करती थीं नागरीदास जी की खवा-

* रूपनगर कृष्णगढ़ से १६ मील उत्तर में है।

† सलेमाबाद रूपनगर से ६ मील दक्षिण में है यहाँ निम्बार्क संप्रदाय की गद्दी परशुराम देव जी ने स्थापन की थी इनके परपोता श्री वृंदावनदेव जी सुन्दर कुँवरि बाई के गुरु थे।

स रंगी चंगी श्री रसिकबिहारी के नाम से अति रसीले पद और हरियश बनाती थीं फिर यह कैसे हो सकता था कि सुन्दर कुँवरि जी ऐसे उग्र कुल में जन्म पाकर काव्य कला से शून्य रह जातीं इन्हों ने तो सब से बढ़कर भक्तिमयी ललित कविता बनाने में निपुणता प्राप्त की थी यह बात इनकी विषद् वाणी से प्रमाण रूप प्रगट हो सकती है।

इनके रचे हुए ११ रुचिर और मधुर ग्रंथों का एक बड़ा संग्रह कृष्णगढ़ में महाराजा प्रतापसिंह जी की राजकुमारी के पास था जब उनका विवाह बूँदी के महाराव राजा विष्णुसिंह जी से संवत् १८(?) में हुआ तो इस प्रसंग से वह संग्रह भी उनके साथ बूँदी में आया फिर उन्हों ने अपने पुत्र महाराव राजा रामसिंह जी को दिया जो संवत् १८६८ में जन्मे थे महाराव राजा रामसिंह जी ने अपनी महारानी बड़े पड़िहार जी को बख़्शा उनके पीछे वर्तमान महाराव राजा जी श्री रघुबीरसिंह जी बहादुर जी० सी० एस० आई० की माजी साहिब को प्राप्त हुआ उन्हों ने विसुंधरारत्न चन्द्रकला बाई जी की प्रार्थना से छपाकर बिना मूल्य बँटवा दिया इसके साथ ही सुन्दर कुँवर जी की भतीजी, नागरीदास जी की पोती, और सरदारसिंह जी की पुत्री, छत्रकुँवर बाई जी का भी १ ग्रंथ है सच तो यह है कि इन दोनों भगवत परायण बाई साहिबों का पुण्य अब सौ सवासौ वर्ष पीछे बूँदी की राजमाता श्री पड़िहार जी द्वारा उदय हुआ है धन्य हैं माजी पड़िहार जी कि जो काम कृष्णगढ़ राज्य के करने का था वह उन्हों ने लोकोपकार के लिये अपना पुष्कल द्रव्य लगाकर पूरा किया और निज कीर्त्ति के साथ साथ उन दोनों सत कविया सुशीला बाइयों की परदे में छिपी हुई उज्वल कविता का प्रकाश भी जगत में फैलाया परमेश्वर जो ऐसी ही श्रद्धा और माजियों को भी दे तो भाषा साहित्य का बेड़ा पार न हो जावे जो सहायता न मिलने से अनभिज्ञता के भँवर में फँस कर डुबकूँ २ कर रहा है।

सुंदर कुँवरि बाई के इन ग्रंथों में कृष्ण लीला और भगवत भक्ति का वर्णन निम्बार्क संप्रदाय के अनुसार बड़े प्रेम और प्यार से किया गया है यह दासत्व भाव भी उनकी कविता के साथ २

कुलामनाय ही से प्राप्त हुआ था और इसके लिये उन्होंने अपने भाई महाराजा बहादुरसिंह जी का गुण गोपी महात्म ग्रंथ में गाया है।

यथा।

संवत शुभ नव दून से। तेईसा की साल ॥
शाके सोरह सै अवर। अठरासिये रसाल ॥
त्रयोदशी वैशाख सुदी। सुभ नक्षत्र गुरुवार ॥
रूपनगर मधि ग्रंथ यह। कीन्हो सुंदर सार ॥
राजसिंह महाराज सुत। सिंह बहादुर बीर ॥
बिक्रमबल बिड़देत अति। दाता सुघट सधीर ॥
भक्तपरायण रसिकमणि। रूपनगर के राज* ॥
निज भगनी सुंदर कुँवरि। लावन शुभ मग काज ॥
यहि प्रबोध शिक्षा दई। पूरन कृपा निवाहि ॥
महा गुप्त धन बेद की। सो दृढ़ाहि चित चाहि ॥
तातें श्री बृंदाविपिन। नित नव युगल बिहार ॥
मन रुचि सुन्दर कुँवरि यह। भाषा किय सुखकार ॥

हम सुन्दर कुँवर बाई के गूढ़ाशय ग्रंथों के नाम निरमाण काल के अनुक्रम से नीचे लिखकर उनमें की कुछ कुछ कविता भी उद्धृत करते हैं।

१–नेहनिधि संवत १८१७ भादों सुदि १३ रविवार रूपनगर मध्ये। इस की समाप्ति में यह अजब बात लिखी है "भादव मास सु शुक्ल में छापि कियो प्रसिद्ध" क्योंकि उस समय छापा तो सब जगह नहीं था कलकत्ते में हो तो हो।

२–वृन्दावन-गोपी-महात्म सं० १८२३ शा० १६८८ वैशाख सुदि १३ गुरुवार रूपनगर मध्ये।

---

* इस से पाया जाता है कि इस समय सरदार सिंह जी का देहान्त होकर रूप नगर बहादुर सिंह जी की भुक्ति में आ चुका था।

३-संकेतयुगल संवत १८३० शाके १६९५ माह बदि ८ भौम वार कृष्णगढ़ मध्ये ।

४-रसपुंज संवत १८३४ शाके १६९९ फागुण बदि ५ चन्द्रवार राधागढ़ मध्ये ।

५-प्रेमसंपुट संवत १८४५ शाके १७१० वैशाख सुदि १५ भौमवार ।

६-सारसंग्रह संवत १८४५ शाके १७१० कातिक सुदि ६ चंद्रवार ।

७-रंगझर संवत १८४५ शाके १७१० मगसर सुदि १० चंद्रवार।

८-गोपी महात्म संवत १८४६ शाके १७११ माघ बदि ११ बुध-वार ।

९-भावनाप्रकाश संवत १८४९ शाके १७१४ माघ सुदि ५ बुधवार ।

१०-रामरहस्य संवत १८५३ शाके १७१८ कातिक सुदि ९ गुरुवार ।

११-पद तथा फुटकर कवित्त ।

गोपीमहात्म्य से ।

दोहा ।

महा रहसि रसि मन हरन । तत्वसार को सार ॥
कह्यो प्रगट श्री व्यास जू । रसिकन प्राण अधार ॥ १ ॥

अथ प्रथम कवि वाच ।

दोहा ।

श्री राधा राधारमन वृजजीवन ब्रज प्रान ॥
बन्दौं निज पद कँवल रज वृंद्राविपिन सुथान ॥ २ ॥

महाघोर कलितम हरन, भक्ति मुक्ति दत दैन ॥
श्री वृन्दाबन मम प्रभू, बन्दौं निज पद रैन ॥ ३ ॥
सुथल सलेमाबाद जिन, गादी नित्त विराज ॥
भवसागर संसार में, सरनागतन जिहाज ॥ ४॥
जुगलउपासिक रसिकमणि निंबावत संप्रदाय ।
जिन दासुतता दीन मैं, लई भाग्य बर पाय ॥ ५ ॥
याही आश्रय यह लह्यो, दुर्लभ सुर्लभ भेव ।
तृण सुमेर है ज्यों कृपा, श्री वृन्दावनदेव ॥ ६ ॥
तातें चित्तवृत चिहुँटके, लहन रसासब चाहुँ ।
श्री मत श्री भागौत के, गोपीमहातम गाहुँ ॥ ७ ॥
श्री मत श्री भागौत के, पात्र भक्त जन चित्त ।
तिन पद रज मम भाल को, भूषन रहो जु नित्त ॥ ८ ॥
गनपति सरस्वति को करौं, प्रणयति नमृत भेव ।
विघ्न हरन मंगल करन, देन उक्त बरदेव ॥ ९ ॥
कहों कथा संबाद जो, वीज स्कध पुरान ।
नइमषार्न में सउनकन, कह्यो सूत व्याख्यान ॥ १० ॥

वृंदावन गोपीमहात्म्यं से

(नारद वाच्च सउनक प्रति)

दोहा अरील (कुंडलिया)

आज्ञा लहि घनस्याम की, चली सखी वहि कुंज ।
जहा विराजत माननी, श्री राधासुख पुंज ॥
श्री राधा सुख पुंज कुंज तिह आई सहचरि ।
वह कन्या का संग लिए प्रेमासब मद भरि ॥

कहत भई करजोर निहोरन बात सयानानि ।
तजहु मान अब मान मान मो राखहु मानिनि ॥ १ ॥
प्रिय के प्रान समान हो, सीखी कहाँ सुभाय ।
चख चकोर आतुर चतुर, चंदाननदरसाय ॥
चंदानन दरसाय अरी हाहा है तोसों ।
वृथा मान यह छाँड़ि कही पिय की सुनि मोसों ॥
सूधे दिष्ट निहार, प्रिया सुनि प्रेम पहेली ।
जल बिन झष अहि मणि जु हीन इन गति उन पेली ॥ २ ॥
कहत स्याम मेरे नहीं, तुम बिन कोऊ आन ।
प्रानहु ते प्यारी प्रिया, काहि करत हौ मान ॥
काहि करतहौ मान चलहु पिय संग विहारी ।
राधा राधा मंत्र नाम वे रटत तिहारी ॥
नायक नन्दकुमार सकल सुभ गुन के सागर ।
तिनसों मान निवार बहुत बिनवत सुनि नागर ॥३॥
उतै अकेले कुंज में, बैठे नन्दकिसोर ।
तेरे हित सज्या रचत, बिबिधि कुसुम दल जोर ॥
बिबिधि कुसुम दल जोर, तलप निज हाथ बनावत ।
करि करि तेरो ध्यान कठिन सों छिनन विहावत ॥
जाके सब आधीन सुनौ आधीनौ तेरे ।
जिहिं मुख लखि ब्रज जियत बहै तौ मुख रुख हेरे ॥ ४ ॥
श्री ब्रजराज कुँवार वे, सब ब्रजप्रान अधार ।
सो कहा जानत घर बसी, तेरे चितहि विचार ॥
तेरे चितहि बिचार कहा कछु मानत नाहीं ।
वे रस बस साधीन, दीन ज्यों रहत सदाहीं ॥
यह अमान है मान ताहि तजि प्रान पियारी ।
उठि चलि मिलु पिय संग, दुचित ह्वै रहे बिहारी ॥ ५ ॥

लखि सनेह तुम दुहुँनको, मेरो जीवन होहि।
जन्म सफल मानहुँ तबै, बिहरत देखहुँ तोहि ॥
बिहरत देखौं तोहि तबै मो नैन सिरावैं।
तुम दुहुँ बिछुरत छिनहि प्रान मेरे अकुलावैं ॥
तौ सनेह के प्रेम रसासव छक्यौ पियारो।
बिरह बिकल ह्वै रहे नेक चल दशा निहारो ॥ ६ ॥
सब सुभ गुननिधि हो प्रिया पारंगता प्रवीन।
/नख सिख तें माधुर्जता, अद्भुत भरी नवीन ॥
अद्भुत भरी नवीन रूप गुन चातुरताई।
नहिं तोसी त्रिय लोक किहूँ प्यारी सुखदाई ॥
तोहि बुलावत अति अधीर पिय आतुर मोहन।
बैठे हैं वहि कुंज लग्यो चित्त तेरे गोहन ॥ ७ ॥
ऐसी पिय की प्रीति है तूही देख विचार।
तान मान यौंही वृथा काहे करत अबार ॥
काहे करत अबार बेग उठि चलि चन्दानन।
अद्भुत सोभावन्त देखि कैसो वृन्दावन ॥
बल्लभ प्रान समान पीय आतुर हित तेरी।
तू जू रही हठि बैठि कहा कहे रसना मेरी ॥ ८ ॥

सारसंग्रह से।

अथ दशा वर्णन।

किधौं विवस घट घाय के, कैधौं मंद मनवार।
किधौं चतुर निश चोर है, कैधौं बहे बयार ॥
तुच्छ कहत स्वर्गादि सुख, अनित काल आधीन ॥
मुक्तिहु गहत न जे चहें, प्रेम भक्ति छक लीन।

मन मतवारे विवस तैं, घूम घुमारे अंग ॥
हँसत कबहुँ रोवत कबहुँ, रसनि दृगनि गति पंग ॥
कहरी जहरी स्याम की, लहरैं उर सरसान ।
कोटि सुधा सरितन सिँचन, तिहिँ सुख गनै न आन ॥
मन उपजन मनही रमन, कहत बनै नहिँ बर्न ।
मिलत एक से रीझ जब, लुटै परस्पर चर्न ॥
नेह उदधि उलहन लहर, हृदय छाय तन सोहि ।
पुलकसिथिल तिहिँ भंग सुर, दृग जल बिवरन होहि ॥
मन भोरे भोरे बचन, भोरे लखहु सुभाय ।
जो त्रय लोक नचात जिहिँ, राख्यो हाथ नचाय ॥
सूधे ते सूधे महा, लख्यो सूध की गाथ ।
जिहिँ गति बिकट त्रिलोक हैं तिहिँ सूधौं किय हाथ ॥
तन मन करि नम्रन भरे, महा दीन तैं दीन ।
तीन लोक के नाथ हरि, करि राखे आधीन ॥
चित छाजै छाजे निरज, छाजे चढे गरूर ।
गनन सुरेसन लेस मो, राना रावन मूर ॥
मन मूरति ह्वै रालि मिलन, आसय आसव छाक ।
तिहिँ सरसन दरसन छटा, जानन जानत ताक ॥

अथ चोर लच्छन ।

मन की मनही मुदतता, तन तिह गूढ हिलोर ।
मौन गहे मुसकत चखन, लखि २ ज्यों निधि चोर ॥

मतवारे लच्छन ।

घूमत मन घूमत सुनन, दृग उनमाल घुमार ।
थकित बैन गति सिथिल चढि, अनउतरन मतवार ॥

घायल लच्छन ।

कबहुँ बिरह कबहुँक मिलत, तनमयता सरसाहि ।
चित चूरत रीझन सरक, बिवस कढ़त मुख आहि ॥

बावरे लच्छन ।

कहुँ चित कहुँ चितवन थकित, कछु हित कछु कहि जात ।
कितही मग चाकत कितहि, मनहु बदै ज्यों बात ॥

(रसपुंज से)

हरी भूमि सोभा भरी, गहवर गली सुगैल ।
मानहु मदन बरात से, ठाढ़े श्याम अमैल ॥ ४४ ॥
गोप लली सब इहिं गली, चली चली जब आय ।
तब कर लकुटी आड़ दै, मोहन कह्यो सुनाय ॥ ४५ ॥

श्रीकृष्णउवाच ।

विपिन हमारे कौन तुम, कहा काज कित जात ।
देहु दान बन राह कर, बहुरि न पूछें बात ॥ ४६ ॥

श्रीललिताबचन ।

तुमको हो टरि जाहु कित, तुम्हरो का बन माँहि ।
बन वृषभान महीप के, नन्द बसाए नाँहि ॥ ४७ ॥

श्रीकृष्णउवाच ।

लंक लचक पग डगमगै, तन थहरत सुकुमार ।
तातैं हमकों देहु यह, शीश गगरिया भार ॥ ४८ ॥

श्रीविशाखावचन ।

हमरे ये ग्रह काज है, नित इत आवत जात ।
तुमहि भार को भार का, क्यों मुख पानी आत ॥ ४९ ॥

श्रीकृष्णवचन ।

बरसाने को स्वाद दधि, अतिही ताकी चाह ।
नीके नीके देहु कै, लूटि लेहिं गे राह ॥ ५० ॥

श्रीरंगदेवीबचन ।

लूटत चोरत फिरत हो, येही गुन है पूर ।
नंद गेह कछु मिलत हू, यापर भरे गरूर ॥ ५१ ॥

श्रीकृष्णबचन ।

गौरव हमरो जग विदित, श्री बृजराज कुमार ।
देहु भलै कै सीसतें, मथनी लेहुँ उतार ॥ ५२ ॥

श्रीतुंगाविद्याबचन ।

कहा करै ब्रजराज सुत, बड़े कढ़े गुन पूर ।
ये श्री भौन कुँवार हैं, रहो अदब सों दूर ॥ ५३ ॥

श्रीकृष्णबचन ।

हम या बन के बसइया, तुम या बन नित आहु ।
आवन जावन चहत तो, हमहिं दान दै जाहु ॥ ५४ ॥

श्रीचम्पकलताबचन ।

दान लेत है जात के, कै द्विज कै डाकोत ।
आहा तुम ब्रजराज सुत, जान परत हो तोत ॥ ५५ ॥

श्रीकृष्णबचन ।

ग्वारनि गारिन देत हौ, अति ही भरी गुमान ।
जान देहिँगे दान लै, नन्दराय की आन ॥ ९६ ॥

श्रीचित्ररेखाबचन ।

फैट बंध बर माल पै, वह निज सुधि न चिताय ।
दधि भंजन गृह भंज तेँ, बँधे चिनगटे खाय ॥ ९७ ॥

श्रीकृष्णबचन ।

वानेँ टारत हो कहा दिए बनेगो दान ।
तुमसी सूम न होत है, बसन हार बरसान ॥ ९८ ॥

श्रीइन्दुरेखाबचन ।

नन्दराय के कुँवर हो, सब गुन पर बिचार ।
ये लच्छन दातार के, चोर और बटपार ॥ ९९ ॥

श्रीकृष्णबचन ।

हमसे माँगत दान हठि, तुम्हरो लख्यो सयान ।
दान मान सोँ देत हैँ, हेर सुठाम सुजान ॥ ६० ॥

श्रीसुदेवीबचन ।

हाँ जू दान जु देत हैँ, हेर सुठाम सुजान ।
पै नाहिन देते सुने, कारे चोरहि दान ॥ ६१ ॥

श्रीकृष्णबचन ।

ग्वारि गँवारिनि तुम सबै, समुझनैं नहिँ कछू मूर ।
चौदह विद्या हम महाँ, सोरह कला सपूर ॥ ६२ ॥

श्रीराधेबचन।

चौदह बिद्या तुम महीँ, सोलह कला बसाय।
तो गुन प्रगट दिखाय कछु, लीजे दान रिझाय॥ ६३॥

कबिबचन।

यह सुनि नटनागर नचे, लिए सखागन संग।
गावत बने बजावत, कर कउतुक रहासि उमंग॥ ६४॥
भाव भेद बंधान गति, तानन गान प्रकास।
अति अद्भुत सुख रहसिरस, वृंदाबिपिन बिलास॥ ६५॥
देखत श्रीराधे सहित, गोपसुता रिझवार।
निर्त्तत नट ह्वै साँवरो, नागर नन्द कुँवार॥ ६६॥

कवित्त।

।गति मोँ मटकि चले छबिसोँ लटकि चाल
उर बनमाल है बिशाल लहकारी जू।
कर की फिरन कटि ग्रीव की मुरनि दृग
उझकि दुरन माँहैँ भाव भरी भारी जू॥
निर्त्तत सुलफ नटनागर रसिक छैल
लखि रिझवारी सब जात वारी वारी जू।
चित्र की लिखीसी राधे बिवम छकीसी रही
आँखन की पाँखेँ बाँधी याखिन बिहारी जू॥६७॥

कवित्त।

स्याम रूप सागर मेँ नैन वार पारथ के
नचत तरंग अंग अंग रगमगी है।
गाजन गहर धुनि बाजन मधुर बैन

नागनि अलक जुग सोधे सगवगी है ॥
भँवर त्रिभंगताई पान पैलुनाई तामेँ
मोती मणि जालन की जोति जगि मगी है।
काम पौन प्रबल धुकाव लोपी पाज ताते
आज राधे लाज की जिहाज डगमगी है ॥ ६८ ॥
गागरि गिरी हैँ केऊ सीस उघरी हैँ केऊ
सुध बिसरी हैँ ते लगी हैँ द्रुम डार कै।
डगमग ह्वै कै भुज धारी गर द्वै कै काहू
बैठि गई कोऊ सीस मटकी उतारि कै ॥
मैन सर पागी कोऊ घूमन हैँ लागी कोऊ
मोति मणि भूषन उतारै डारै वारि कै।
ऐसी गति हेर इन्हैँ ग्वार कहै टेरि टेरि
मदन दुहाई जीति मदन मुरारि कै ॥ ६९ ॥
मन रिझवार ये तो घायल सुमार बिन
सुभट करार ज्योँ सँभार को सँभारि कै।
ललिता कहत ओर सुनहु गँवार ग्वार
करत उभार ऐसे काहे गाल मारि कै ॥
आछे जयवार देखे मदन मुरारि जू को
रहौ रे लबार गिरिवान मुँह डारि कै।
नाचन नचाय लीने कैसे मनमाने कीने
जीत है हमारी वृषभानु की कुँवारि कै ॥७० ॥

श्रीललिताबचन दोहा।

आवहु श्याम सुजान जू, बकसीसन अब दान।
सब दधि भजन देत हैँ, रीझ सुता वृषभान ॥७१॥

संकेत सुगलसे ।

सवैया ।

श्री वृषभानु सुता मन मोहन, जीवन प्रान अधार पियारी ।
चंद्रमुखी सुनिहारन आतुर, चातुर नित्त चकोर बिहारी ॥
जा पद पंकज के अलि लोचन, स्याम के लोभत सोभित भारी ।
सर्नहौं हूँ जिन चर्नन के प्रिया, नेह नवालि सदा मतवारी ॥
सुंदर स्याम मनोहर मूरति, श्री बृजराज कुँवार बिहारी ।
मोरपखा सिर गुंज हरा, बनमाल गले कर बंसिका धारी ॥
भूषन अंग के संग सुशोभित, लोभित होत लखै व्रजनारी ।
राधिका बल्लभ सो द्रग गेह, बसौ नव नेह रहो मतवारी ॥ २ ॥

कवित्त ।

धाम अभिराम ग्राम नाम सुलेमाबाद
कलि भवसागर में नवका तरन कौं ।
गादी श्रीपरशुरामदेवजू स्थापि जहाँ
लोक दया हेरी त्रय ताप के हरन कौं ॥
बृन्दावनदेव निज दासता कि छाप मेरे
भाल तहाँ दीनी हरी आश्रय करन कौं ।
महादीन हीन मति कीनी हो सनाथ नाथ
कोटि कोटि दंडवत तिनके चरन कौं ॥
भक्त ऋषिराज प्रभु जगत उद्धार काज
प्रगट बिराजि तारे बूडत नरन कौं ।
वृंदावनदेव सोई छाप निज दासिता की
दीनी मेरे भाल श्री कृपाल भै हरन कौं ॥
जन्म त्रास टारी अपनाय की निहाल भारी

कीनी पात्र राधा राधाबर की सरन कौं ।
दुर्लभ अगाध गाथ सुलभ दई है नाथ
कोटि कोटि दंडवत तिनके चरन कौं ॥

दोहा ।

सब हरि भक्तन धरन जब, बंदों भाग्य प्रभाय ।
मेरे भूषन भाल सो, रहो अभय फल दाय ॥
इनके कृपा प्रभाव तैं, फुरै हृदै मो आन ।
श्रीराधा राधारवन, रहसि ध्यान बाखान ॥
हरि गुरु भक्ति सुभक्त जन,ये मो देव मनाय ।
महा गुप्त धन वेद को, रहसि कहूँ कछु गाय ॥
कविता रचन प्रबंध है, तहाँ कविन मजाद ।
कारन सुर ये काव्य मति । दाता ज्ञाता आद ॥

प्रेमसंपुट से ।

(श्रीजमुनाबचन)

कवित्त ।

लोचन लगों हैं ज् पगों हैं प्रिया माधुरी पै
झूमे छकछाए बेर राखा है दबाय के ।
अतिही भली न ऐसी चढ़ै न करी नैरति
छाजे चित छाजे लोभ लागै उरराय कै ॥
दृष्टि लगि सिथिल सँभार सुकुवार है जो
बित्र संगताई तन नैको दरसाय कै ।
सहि न सकै है ना सकै है पै न कै है इती
पैहै जल मुहे प्यारी चरन धुवाय कै ॥१॥

दोहा।

रसिक मुसिक बोले अजू, नीकी कही बिचार।
बनत पहलही कीजिए, उसत्रासहिँ उपचार॥

रङ्गझर से।

कवित्त।

बोलिकै जिठानी दिवरानी श्रीबृजेसुरी जू।
गोपन कुँवारी औ दुलारी सब संग लै॥
आँगन उदार ठौर ठौरहि बिबिध झूलैँ।
झूलत झुलावत लड़ावत उमंग लै॥
हँसहि हँसावैँ सबै मोद सरसावैँ अति।
चुहुल मचावैँ छबि छावैँ यहि बंग लै॥
रहसि रचावैँ पिय नावँहि लिवावैँ तहाँ।
झुकि झुझलावैँ मुसिकावैँ कहैँ रंग लै॥ १ ॥

दोहा।

श्रीप्यारी झूलत तहाँ, नाँव लिवावन हारि।
लखि लजान सिथिलान इन, तृन तोरत थुथकार॥ २ ॥

कबित्त।

जित तित झूलैँ सब गोपिका समूह झुंड।
झमकि झकोरन की सोभा सरसावहीँ॥
पटुरी की डोरन हिलोरन द्रुमन मानोँ।
अछुरी दै घटा मौर ओट घन आवहीँ॥
केऊ चबपालन चलन सुररमनी ज्यौं।

रीझतीज रमन विमानन पै धावहीं ॥
फिरकी के फिरतै घिरत द्रग संग मन।
रूप जाल चक्र परि फिरन न पावहीं ॥ ३ ॥

दोहा ।

बृजरानी झूलत जहाँ, सिंहासन छवि पाय ।
नृत्य गान बाजित्र के, महा रंग सरसाय ॥ ४ ॥

नेहनिधि से ।

श्रीप्रियाछविवर्णनयथाकवित्त ।

मोतिन की बेलि सी मुरानी सकुचान भरी ।
आनन फिरानी कर कानन धरत है ॥
चकित चितौन है अजान मुसकान दाबै
फाबै भाव भरी भौंहैं चित जो भरत हैं ॥
मैन धनुबान सजे मुक्तन लता पै चंद
घूंघट के कोट मानो मृगया करत हैं ॥
सारंग सुजान श्याम धाय घट घूमै अग
गहर उमंग मन मोहनी परन है ॥१॥
लोने दृग कौने पलकानन छुवत चलि
झीने पट देखि पिय दृग गति पंग है ॥
पौन के परस होत हलचल घूंघट ज्यों
त्योंही त्यों विवस छकि साँवरे को अंग है ।
आन कान लागि मन जान कहे प्राणप्यारी
कैसे ए कहाँ ते लसे अचरज ढंग है ॥
मुख के दहूल झूल झूलन झुलाने उर

सबहिन जानैं एतोहुं नर फिरंग है* ।

सवैया ।

मन मोहन के दृग की गति तौ मन संग लै घूँघट की टगई ।
लखि मास लखात किशोरी लखात सुभौंहैं कछू इतरान ठई ॥
इतरानहीं की ललचान इतै लागि छूटन नैनन आव पई ।
रहि कान का लाजही रीझ गही इनहूँ तैं वहे रिझवार भई ॥१॥

भावनाप्रकाश से ।

कवित्त ।

स्वेत हैं तुरंग जिहिं चित्रित विचित्र अंग
  मिहदी सुरंग पद मोती लरैं लटकैं ।
जीन जरतारी कै जवाहिर जरतकारी
  पायेरे जलज झब्बा झूलै लागि ललकैं ॥
हरित केमी रनपनासु मुक्त जुत जोट
  हार औ हमेल मेल चौकी छबि छलकैं ।
यालन बिशाल गुहा सीप सुता माल भार
  बेना तापै कलँगी लखत बोधे फलकैं ॥

दोहा ।

अलबलियो रसियो सुघर, स्यार छैल छंछाल ।
कुँवर भँवर छबि छकन लसि, प्रिया प्रेम मतवाल ॥१॥

कवित्त ।

केसर के रंग झीनो भीनो नीमा अंगचुस्त
  मोतिन दिवालगीर चुनवट की लहरैं ।

---

* फरांगयों का हुनर उस समय से राजपूताने में फैलने लगा था ।

रैनी इकबोर जोर ललित लपेटा जाके
　　पेचन कुपेच छज नागरीन चहरें ॥
तापै सिर सोभा लरि मुक्तजाल गुच्छ छोगा
　　लटकन झुलन भाल करगी की थहरें ॥
सामिलता भूषन सुमन छबि भीर चीर ।
　　चढ़िय सिंगार ध्वजा चंद्रिका सुफहरें ॥

फुटकर कबिता से ।

कबित्त ।

कचकच खण्ड ब्रह्मण्ड कोटि २ तेरे ।
　　मेरे रोमकूप ज्यों पै अघ उफनात है ॥
तेरे लच्छ बिरद अपार मेरे अपलच्छ ।
　　त्यों तेरे सर्व सक्त मो अक्त तिल्मात है ॥
औगुनहि एही जग मेरे स्वामी गुनग्राही ।
　　तेरे आसरे तें गानिका हू गति पात है ॥
गरीब नेवाज तैं गरीब मैं निवाजे क्यों न ।
　　लाखलाख बातन की सूधी एक बात है ॥ १ ॥

ख्याल ।

राजपनाँ गावाँजी गावाँजी थारो लाड़ अलबेली कुँवरि मोहनीजी ।
राजपनाँ वाराँजी वाराँजी कोटिक चंद अलौकिक जोहनीजी ॥
राजपनाँ मुखड़े कंवल कुरबान मदन भाला लोयणाँ ।
राजपनाँ मिहर नजर बकसीस पियारी नित जोयणाँ ॥
राजपनाँ पिताजी महीपति भान निहारें वारें नौनिधाँ ।
राजपनाँ बीर मानै छै निधि मूल करे छै कोड़ विध विधाँ ॥

राजपनाँ माय कीरति महारानी पल पल देखाँही जिए।
राजपनाँ काका बाबा सहुपरवार वारे नै पानी ड़ोपिए॥
राजपनाँ प्रेम रसासव छाकि बहनन्याती हुई सखियाँ।
राजपनाँ रूप सुधा रस लोभ भावजै मधुमखियाँ॥
राजपनाँ सुसरो मानै छै निज भागाँरी महिमा घड़ी घड़ी।
राजपनाँ सासू जसोमति रानी जानै छै जियरी जड़ी॥
राजपनाँ अनउतरण मतवाल छकाँणोँ थारे साहिबो।
राजपनाँ नवलनेह मतवाली नैयों छक अवगाहिबो॥

पद।

त्राहि त्राहि वृषभानु नंदिनी तोकों मेरी लाज।
मन मलाह के परी भरोसे बूड़त जन्म जहाज॥
उदधि अथाह थाह नहीं पइयत प्रबल पवन की सोप।
भ्रम राग हरत रंग भयानक लहरन की अति कोप॥
ग्रसन पसारि रहे मुख ता महि कोटि ग्राह से जेते।
बीच धार तहँ नाव पुरानी तामहि धोखे केते॥
जो लगि सुभ मग करै पार यहि सो खेवट मति नीचि।
वही बात अतिही बौरानो चहत डबोवन बीच॥
याको कछु उपचार न लागत हिय हीनत है मेरो।
सुंदरि कुँवरि बाँह गहि स्वामिनि एक भरोसो तेरो॥ १॥

पद।

तजो चोरी की घात अयान की॥
नंदराय के लला लड़ोहै अब सुनो बात सयान की।
कीरत पठई दुलहा देखन तिय आई बरसान की॥

सुंदर कुँवरि सुलच्छन गुननिधि व्याहोगे वृषभानु की ॥
आई है ते जाय कहेगी बात रावरे आनकी ॥
सास कहेगी चोर कुँवरको ना योँ सुता प्रिय प्रानकी ।
इक तो कारो चोर भयो फिर दइया छापलजान की ॥
सुनि हँसिहैँ चंदाननि दुलही जिह उपमा न समान की ॥ २ ॥

पद ।

मेरी प्रान सजीवन राधा । टेक ।
कब तो बदन सुधाधर दरसे मो अखियन हरे बाधा ॥
ठमकि ठमकि लडिकौंही चालन आव सामुहे मेरे ।
रसके बचन पियूष पोष के कर गहि बैठहु मेरे ॥
रहसि रंग के भरी उमंगन ले चल संग लगाय ।
निभृत नवल निकुंज विनोदन विलसत सुखदरसाय ॥
रंग महल संकेत सुगल के टहलिन करहु सहेली ।
अज्ञा लहौँ रहोँ तहाँ ततपर बोलत प्रेम पहेली ॥
मन मंजरीजु कीन्हों किंकरि अपनावहु किन वेग ।
सुंदर कुँवरि स्वामिनी राधा हिय की हरौ उदैग ॥ ३ ॥

अथ हिंडोरा का ख्याल।

है हिंडोरे हेली आज अनव रंग स्याम संग सहेली ।
झूलन चढ़ी है नवेली मनहु नीलमणी बेली सी घुरोही अंग ॥
झमकि झकोरेँ चढ़ात त्यों त्यों कुँवरि सनरात ।
अली यह उमँग बढ़ावत अपुने वंग ॥
मनमथ अमल अगाधे अधर अखर कहै ।
आधे दृग गति नव नेह साधे रही है पंग ॥

रामरहस्य से ।

छन्द पद्धरी ।

चतुरंग चमू अति छबि बिराज । मणि कनक साजि गजराज बाज ॥
पुनि दुरद पीठ गजै निसान । धुनि होत दुंदुभी घन लजान ॥८३॥
केउ चले गजन पै गुनी नाम । गावैँ जो कीर्नि कीनी सुराम ॥
पुंनि चढ़े अश्व सोभित अपार । छैत्रेत सुभट साजै सिंगार ॥८४॥
पखरैत किते हय के सवार । जिन जिरह टोप ओपै अपार ॥
राजै अनंत सावंत सुढंग । कर गहैँ चाप कटि कसि निषंग ॥८५॥
सिंदुनन स्वार शोभा अनूप । सुरगन बिमान नहिं लगत जूप ॥
कसि कमर अमर से चले बीर । अति भई बाहिनी की जु भीर ॥८६॥
पैदल दल शोभा के समूह । लखि चकित रहत सुर बिबिधिगूह॥
है किते कटक नाहिन प्रमान । सोभा समुद्र जू उमड़ आन ॥८७॥

कवित्त ।

बाजत नगारे अरु गाजत गयंद भारे ।
भयमान अरी की नरीन गही दरी हैँ ॥
दलपारावार को अपार रव रह्यो छाय ।
भाजैँ राज राव उर उठैँ धरधरी हैँ ॥
बाँधत जे बान सुर ताके तेऊ थहरान ।
केऊ नजराने दै पुरी की रच्छा करी हैँ ॥
अलका मैँ अलकनि मैँ मरु माँहि पलकन मैँ ।
सूर की बधू कैहू चमू की रज [illegible] हैँ ॥ ८८ ॥
घन की घटासी चढ़ी धूर सैन [illegible]यन की ।
दामिन झमक छबि तामैँ बरछान कै ॥

पीठ गजराजहिँ निसान फहरान पीत।
बिवधे मणिन दंड इन्दु धनुवान के॥
घाम रवि छादित अराम मग छाँह चलैँ।
प्रेम के विनोदी रामरंग सरसान के॥
जानहु सुजान भान कुल के बड़े के कान।
छायो मानो रज को बितान आसमान के॥ ८९॥

दोहा।

आगे डेरा राम को, भयो सुभग सरसाय।
मारी जहाँ सुताड़िका, दिय मुनि मोद बढ़ाय॥
बाग बिपुन गंगा निकट, जहाँ मुनिन को वास।
सोहत है बन जीव सो, देखत बढ़ै हुलास॥

सवैया।

चारु चमूँज अपार लसैं, गजराज की पीठ पै होत नगारो।
नीकी अनीकिनी पीत निशान यों, सोहत है छबि नैन निहारो॥
साँवेर रंग अनूपम अंग, अनंगहू तौ सम नाहिँ बिचारो॥
आयौ यह सखि ओध के रावसु, पाहन पाँव उड़ावन हारो॥९१॥

३४ हरीजी रानीचावड़ी जी।

जोधपुर के महाराजा श्रीमानसिंहजी की दूसरी रानीचावड़ी जी जो गाँव माणसा इलाके गुजरात के ठाकुर की बेटी थीं बहुत सुघर सुजान रानी थीं महाराजा इनको बहुत चाहते थे और इन्हीं से उनके इकलोते पुत्र महाराज कुमार छत्रसिंहजी का जन्म हुआ था इस हेतु से भी वे इनके हित साधन में तत्पर रहते थे।

महाराज के सतसंग से इन रानी जी को भी कविता और गान विद्या में अच्छा अभ्यास हो गया था और ये इन बातों से गुण-

आही महाराजा को दूसरी रानियों से अधिकतर रिझा लिया करती थीं। और कभी कभी मान करके रूठ भी जाया करती थीं जिसके भाव के कई ख्याल और टप्पे महाराजा की बनाई हुई गाने की चीज़ों के संग्रह में पाए जाते हैं जिनमें यह एक ख्याल धनासरी की धुनका है।

सालूडो मँगादे साँगानेर रो ।
रंग भीना राजा जी ॥
अंगन कटारी भाँत अनोखी ।
लागो छे लप्पो चारों मेररो ॥ ॥ सा० ॥
हरो रंग कलियाँरो घागरो ।
आगरे गे घेर घुमेररो ॥
रसीले * राजम्हे जिणरी खातर ।
रूसणो कियो छे † बीजी बेररो ॥

कभी २ महाराजा भी इनसे रूठ जाते थे एक समय की बात है कि ये अपने भवन में न्हा रही थीं महाराजा पधारने लगे तो इन्होंने नाज़िर की जबानी कहला दिया कि मैं इस क्षण नंगी हूँ आप पधारें तो आप को नाथ जी की आन है। महाराजा लौट गए फिर इन्होंने न्हा धोकर शृंगार करके महाराजा को बुलाया तो महाराजा जी नहीं आए और कहला दिया कि तुमने हमको इतनी मोटी आन नाथ जी की दिलादी है सो कैसे आवें चावड़ीजी ६ महीने तक महाराजा को मनाती रहीं परन्तु ‡ मानी महाराजा नहीं मने निदान इसी झमेले में सावन की तीजों के मेले आगए काली २ मतवाली घटाएँ अकाश में छा गईं बिजलियाँ चमकने

* रसीलराज महाराजा का भोग था— † दूसरी बेर।

‡ किसी कवि ने महाराजा के गुणों का १ कवित्त कहा जिसका यह पिछला चरण यहीं लिखने योग्य है —
ध्यानी राजामानसे न ज्ञानी राजामानसे न दानी राजामानसे न मानी राजामानसे—

लगीं उस समय चावड़ी जी ने यह ख्याल * हजाज रागनी का बनाकर महाराजा को मना लिया।

बेगानी पधारोम्हारा आलीजा जी हो ॥
छोटी सी नाजक धणरा पीव ॥
ओ सावणियो उमंग रयो छे ॥
हरी जी ने ओडण दिखणी चीर ॥
इण औसर मिलणो कद होसी ॥
लाडी जी रो थॉपर जीव ॥
छोटी सी नाजक धणरापीव ॥ बेगानी

महाराजा ने इनके देखते और भी कई विवाह किए थे१ विवाह में जब महाराजा दूलह बनकर जाने लगे थे तो इन्होंने यह ख्याल उसी हजाज रागनी में बनाकर अपनी गायनों से गवाया था।

चालो मृगा नैणियॉ जी चम्पा बाड़ियाँ।
जठे लाल तम्बूड़ा तणियॉ ॥
पनो† सुमेर संगग साथी।
ज्यूँ मालारा मणियॉ ॥
रसीलो राज बीद मदमातो।
सुख समाज रंग वणियॉ ॥
फेर बधावण चालो सखियाँ।
पिव केसरिया बणियाँ ॥

संबत् १८९३ में सरदारों और मुत्सद्दियों की नमकहरामी से कुछ ऐसी पेच आकर पड़ी कि महाराजा राज छोड़ कर अलग बैठ गए। और

* यह रागनी मुसलमानी सगति में की दस से मिलती हुई है—

† प्यारा

महाराज कुमार को युवराज पदवी देकर राज सौंप दिया कुँवर जी ने नमक हरामों के बहकाने से कई उपाय महाराजा के मारने के किए परन्तु महाराजा तो मरे नहीं और कुँवर जी ही दुर्व्यसन में पड़कर चैत्र बदी ९ संवत १८७४ को मर गए। उस समय और तो क्या तन के कपड़े भी महाराजा के बैरी हो रहे थे जिस का प्रत्यक्ष प्रमाण यही है कि चावड़ीजी जैसी सयानी रानी पतिपरायणा और कुलांगना होकर भी पुत्र के मोह से नमकहरामों के साथ [illegible]पट करने लगी थीं। जिससे संवत १८६६ में जब महाराजा [illegible] राज्य सँभाला और नमकहरामों के प्राण लिए तो इन को भी १ कोठड़ी में बंद कर दिया था इन्होंने मारे रोस के कई दिन कुछ खाया पीया नहीं जिससे प्राण मुक्त होगए।